संत नामदेव

राष्ट्रीय जीवन-चरित माला

संत नामदेव

लेखक

ल. ग. जोग

अनुवादक

हीरालाल शर्मा

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

पहला संस्करण 1987 (शक 1909)
पांचवीं आवृत्ति 1990 (शक 1912)

Sant Namdev (*Hindi*)
रु. 9.50
निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110 016 द्वारा प्रकाशित.

अनुक्रमणिका

1. संत नामदेव: कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न

भारत में लोगों के जीवन की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त नहीं होती। कालिदास कितना महान कवि था, पर उसके समय की, उसके जीवन की, उसके जन्म और मृत्यु आदि की कोई प्रामाणिक जानकारी अभी भी उपलब्ध नहीं है। इसका प्रमुख कारण यह है कि व्यक्ति के सांसारिक जीवन का इतिहास जतन में रखने की प्रवृत्ति ही हमारे यहां प्राचीन काल में नहीं रही। यहां की संस्कृति में देह के प्रति विरक्ति भी इसका एक कारण हो सकता है। कालिदास के समान भवभूति के बारे में भी यही बात बहुत कुछ लागू होती है।

मराठी साहित्यिकों के बारे में भी इसी प्रकार कई बातें अज्ञात है। सखू नाम की एक महान भगवत् भक्त थी। उसके जीवन व मृत्यु आदि के बारे में थोड़ी सी जानकारी भी नहीं मिलती है। सामान्य लोगों से संत कई बातों में निराले ही होते हैं। विशेषकर अपने देह व जीवन के बारे में वे अधिक ही उदासीन रहते हैं। सांसारिक बातों की ओर उनका ध्यान ही नहीं रहता।

इसी संदर्भ में संत नामदेव के जीवन पर विचार करते समय कुछ बातें स्पष्ट रूप से सामने आती हैं। नामदेव ने स्वयं अपना आत्मचरित लिखा है। नामदेव के नाम से लिखित एक जीवन चरित उपलब्ध है और नामदेव की रचनाओं में भी उसका उल्लेख है। उक्त जीवन चरित के अनुसार नामदेव का जन्म ई॰ सन् 1270 में हुआ था और ई॰ सन् 1350 में उन्होंने समाधि ली थी। महाराष्ट्र के एक अन्य महान संत ज्ञानदेव के वे समकालीन थे। नामदेव जाति के दर्जी थे। दक्षिण भारत की काशी के रूप में प्रसिद्ध पंढरपुर में उनका जन्म हुआ था और वहीं उन्होंने समाधि ली थी। इसका उल्लेख नामदेव की पुत्रवधू द्वारा रचित एक अभंग में है।

यह कहा जाता सकता है कि अन्य संतों की अपेक्षा नामदेव के बारे में अधिक जानकारी मिलती है। इसका आधार है नामदेव कृत आत्मचरित और बाद में अन्य लेखकों द्वारा लिखे गये उनके चरित। नामदेव के जीवन के बारे में कई विवाद भी हैं। उपलब्ध समस्त जानकारियां विवादग्रस्त है। एक ओर ऐसा लगता है कि नामदेव का जीवनचरित पूरी तरह से ज्ञात है पर तभी यह भी स्पष्ट लगता है कि यह सारी जानकारी अपूर्ण है और नामदेव के बारे में बहुत सी बातें अभी भी अज्ञात ही है। यह विचित्र विरोधाभास ही एक वास्तविकता है। इन जानकारियों को लेकर नामदेव के जीवन चरित के बारे में विद्वानों में गंभीर मतभेद है जो पर्याप्त मनोरंजक भी हैं।

काव्य व श्रद्धा के आवेग में यहां तक कहा गया है कि नामदेव अजन्मा थे और वे साक्षात् भगवान ही थे। पर इस बात को महत्व देना आवश्यक नहीं है। विवाद का प्रमुख विषय है नामदेव का जन्म काल। बाबाजी नाम के ब्राह्मण द्वारा बनाई गई जन्म कुंडली में शक 1192 व प्रभव संवत्सर का उल्लेख है। पर उक्त शक वर्ष में प्रभव संवत्सर था ही नहीं। प्रभव संवत्सर शक 1309

में आता है। इसका मतलब यह हुआ कि नामदेव का जन्म ई॰ सन् 1270 के बदले ई॰ सन् 1387 का सिद्ध होता है। इस तिथि के अनुसार नामदेव ज्ञानदेव के समकालीन सिद्ध नहीं होते। पर ज्ञानदेव भी दो हो गये हैं। और विद्वानों की यह मान्यता है कि पहले हुए नामदेव के समय में अभंगकर ज्ञानदेव हुए थे। स्वयं नामदेव के काव्य में ज्ञानदेव व नामदेव द्वारा एक साथ की गई तीर्थयात्रा का वर्णन आया है। ज्ञानदेव व नामदेव के समकालीन संतों का जो उल्लेख इन दोनों की रचनाओं में हैं, उससे दूसरा मत सही प्रतीत नहीं होता और नामदेव का जन्म शक 1192 (याने ई॰ सन् 1270) में हुआ था, यही बात बहुत कुछ सर्वमान्य हो गई है। कहा जाता है कि उनकी आयु 80 वर्ष की थी। इसके मुख्य आधार दो हैं। पहला लाड़ाई का अभंग व दूसरा बाबाजी ब्राह्मण की पत्रिका का संदर्भ। इनमें से पहला आधार अधिक विश्वसनीय है क्योंकि उसमें 80 वर्ष का उल्लेख नहीं है, केवल शक 1272 (याने ई॰ सन् 1350) का उल्लेख है। इसलिए नामदेव की आयु 80 वर्ष थी, यह बात अब साधारणतः सर्वमान्य हो गई है।

नामदेव के जन्म स्थान पंढरपुर की बात भी चर्चा का विषय बनी हुई है। कुछ लोगों का मत है कि उनका जन्म नरसीबामणी नामक गांव में हुआ था और बहुत दिनों बाद वे वहां से पंढरपुर आये। इस गांव नरसीबामणी के बारे में सब एक मत नहीं है। इस नाम के तीन गांव महाराष्ट्र में है और इसमें से कौन सा उनका जन्म स्थान है, यह अभी तक तय नहीं हो सका है। नामदेव ने .हदी में काव्य-रचना कर उत्तर भारत में महत्वपूर्ण स्थान बना लिया था। उन रचनाओं के अध्ययन से भी यही समस्या सामने आती है। एकनाथ के अनुसार नामदेव के पूर्वजों ने पुत्र प्राप्ति के लिए भगवान पंढरी की मनोती ली थी। इस पर से जना बाई के अभंग से यह कहा जा सकता है कि नामदेव का जन्म पंढरपुर का होना चाहिए। लेकिन 80 वर्ष की उनकी आयु के बारे में जितनी अधिक सर्वमान्यता है उतनी उनके जन्म स्थान के बारे में नहीं है। अभी भी बहुत से विद्वान उनका जन्म स्थान पंढरपुर ही मानते हैं।

यह माना जाता है कि नामदेव की समाधि पंढरपुर में है। पर यह बात भी बड़ी विवादास्पद बन गई है। कुछ लोगों का मत है कि पंजाब के गुरुदासपुर जिले के घोमान नामक स्थान में नामदेव की समाधि है। अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में नामदेव पंजाब की ओर धर्म प्रचारार्थ गये थे और वहीं उन्होंने प्राण त्यागे। वहां उनकी समाधि व बड़ा मंदिर भी बना है और वहां के नामदेव-भक्तों की मान्यता है कि नामदेव की समाधि वहीं है। इतना ही नहीं वहां के भक्त तो नामदेव का समय ई॰ सन् 1387 से 1467 तक का मानते हैं। (यह ध्यान देने योग्य है कि अभंगकर ज्ञानदेव व नामदेव समकालीन थे, यह मानने वालों के मत के अधिक निकट यह समय आता है)। नामदेव द्वारा पंढरपुर में समाधि लेने का उल्लेख अप्रत्यक्ष रूप से लाड़ाई के अभंगों में मिलता है। गोंदा, विठा व परिसा भागवत के अनुसार भी नामदेव की समाधि पंढरपुर में ही है। गोंदा व विठा नामदेव के पुत्र थे और परिसा भागवत उनका समकालीन एक संत कवि था। समूचे महाराष्ट्र में यही बात सर्वमान्य है। किसी व्यक्ति के जीवन के इतिहास में उसके जन्म व मृत्यु का समय, जन्म स्थान व प्रमुख घटनाओं का उल्लेख रहता है। संत नामदेव सम्बंधी उपरोक्त बातों पर अवश्य भारी मतभेद है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि यहां उल्लिखित पहला मत ही प्रायः सर्वमान्य है। नामदेव के सम्पूर्ण जीवन पर विचार करने पर और भी कई विवादग्रस्त घटनाएं सामने आती है। नामदेव के बचपन से

लेकर उनके शरीर त्यागने तक की अवधि की अनेक आख्यायिकाओं का वर्णन कई कवियों व संतों ने बड़ी श्रद्धा से किया है। इनमें से कुछ ये हैं:-

1. नामदेव द्वारा दिया गया नैवेद्य स्वयं भगवान बिट्ठल द्वारा खाया जाना।
2. पंढरपुर के सिवा अन्य किसी भी तीर्थस्थान की यात्रा करना नामदेव नहीं चाहते थे पर स्वयं पांडुरंग की आज्ञा से वे ज्ञानदेव के साथ तीर्थ यात्रा को गये।
3. यात्रा में नामदेव ने भगवान विट्ठल की प्रार्थना की और शुरू से सूखा कुआं पानी से लबालब भर गया।
4. तीर्थयात्रा की समाप्ति पर नामदेव ने जब प्रीतिभोज दिया था तो स्वयं भगवान श्री विट्ठल यजमान बने थे।
5. नामदेव ने एक बार मरी हुई गाय जीवित कर दी थी।
6. एक बार मंदिर के पीछे उन्हें कीर्तन करना पड़ा था, तब वह मंदिर पूरा घूम गया था।
7. कुत्ते के रूप में आये भगवान को नामदेव ने घी से चुपड़ी रोटी खिलाई थी।
8. भगवान ने साहूकार का वेश धारण कर नामदेव के घर धन दिया था।
9. नामदेव के घर का छप्पर स्वयं भगवान ने ठीक किया था।
10. ज्ञानदेव का दर्शन करने के लिए व्याकुल हुए नामदेव को ज्ञानदेव ने दर्शन दिये जबकि काफी समय पहले ज्ञानदेव समाधि ले चुके थे।
11. नामदेव के लेखन का कार्य स्वयं पांडुरंग ने किया।
12. नामदेव के घर में रखा घोडोंबा नाम का पत्थर सोने का हो गया। इस तरह की कई आख्यायिकाएं नामदेव के जीवन से सम्बंधित हैं। उस समय के लोगों ने बड़ी निष्ठा से इन घटनाओं को केवल जीवित ही नहीं रखा बल्कि उनमें कुछ जोड़ा भी। उन दिनों में दैवी चमत्कारों पर न तो कोई संदेह करता था और न उन पर कोई विवाद ही होता था। प्रत्येक संत कवि के जीवन में ऐसी अद्भुत घटनायें मिलती ही है। नामदेव भी इसके अपवाद नहीं हैं।

नामदेव के जीवन से संबंधित चमत्कारपूर्ण घटनाओं को सत्य की कसौटी पर कसने से कोई विशेष लाभ नहीं होगा। पर उनके जीवन में ऐसी कुछ घटनायें अवश्य हुई थीं जो उन्हें जानने वाले लोगों के मन में भी उत्सुकता जगाती हैं। इनमें से एक बात यह है कि क्या बचपन में नामदेव लुटेरे थे? परंपरागत जानकारी के अनुसार यह सही है कि नामदेव बचपन में लुटेरे ही थे। पर इस बाबत बड़ा विवाद है। नामदेव को लुटेरा नहीं मानने वाले लोग बहुत बड़ी संख्या में है। इस लेखक की भी मान्यता है कि नामदेव लुटेरे या डाकू नहीं थे।

लेकिन आश्चर्य है कि लोगों की यह धारणा कैसे बन गई कि नामदेव लुटेरे थे। नामदेव की गाथा में "छप्पन चरणी" नाम का एक अभंग है जो उनके आत्म चरित का ही भाग है। इसी कारण इस अभंग को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। उक्त अभंग का सारांश इस प्रकार है — "नामदेव बिगड़ गया। यात्रियों को लूटता है। बादशाह ने उसे पकड़ने के लिए सेना भेजी। नामदेव ने 84 घुड़सवारों को मार डाला। बाकी भाग गये। एक दिन ओढया नागनाथ के मंदिर में उन्हें रोती-बिलखती हुई

अटल, पांकती, मांडियले, भेटिले व संतामधे के रूप में किया गया है। इसी प्रकार उनकी हिंदी व मराठी रचनाओं में साम्य के निम्नांकित कुछ उदाहरण देखिये।

हिंदी

मोंही लागती तालाबेली।
बेछरे बिनु गार अकेली।।

मराठी

वत्स न देखतां गाई हंवरती।
जाले मजप्रती तैसे आता।।

हिंदी

उदक मांहि जैसे बगु धियानु मांडे।

मराठी

बक ध्यान लाउनि हाली।
मौन धरुनि मासा गिली।।

इस प्रकार की समानता बहुत मिलती है। निम्नांकित अभंग तो हिंदी व मराठी में पूरी तरह एक जैसा ही है।

एकै बीठला सरने जा रे।
जनम वाया का दौड़ा रे।। टेक।।
तीरथे तीरथे का हिण्डा रे।
लटक्या डोया का मुण्डा रे।।1।।
फोकाचिया तुलसी वाहा रे।
धूरू सरिसा पद जोड़ा रे।।2।।
नामौ मणै उ देवय हरि।
कैसौ भगतांचा ऋणिया रे।।3।।

उपरोक्त रचना मराठी अभंग का अनुवाद ही है। मराठी अभंग इस प्रकार है —

एका विट्ठला शरण जा रे
जन्म वायां का दवड़ा रे।।1।।

काय करूनि तीर्थाटणे
मन मरले अवगुणे॥2॥
फुकाचिया तुलसी वाहा रे
धूरूवा सारिखे मद मागा रे॥3॥
नामा म्हणे हा देवो पाहा रे।
विट्ठल भक्तांचा ऋणियारा रे॥

इन हिंदी व मराठी अभंगों में केवल एक चरण में भिन्नता है। पर दोनों में बहुत अधिक साम्य है। हिन्दी अभंगों में नामदेव के जीवन की घटनाओं का उल्लेख कई बार आया है। नामदेव ने अपने गुरू विसोबा खेचर का उल्लेख मराठी व हिन्दी अभंगों में भी किया है। उदाहरण —

नामदेवजी के गुरू सिखावे
खेचरी मुद्रा गाई॥
खेचर भूचर तुलसी माला।
गुरू परसादि पाइया॥

इसके सिवा विट्ठल व पंढरी का उल्लेख भी मिलता है। उदाहरणार्थ —

जम जाऊं तत्र वीठल मैला।
बीठ लिऔ राजाराम देवा॥
पहिले पुरिये पुंडरिक बना

एक और उदाहरण—

दूध कटोरे गड़वे पानी
कपिल गाई नामे दुहि आनी॥

इसी प्रकार नामदेव द्वारा दिया गया दूध स्वयं भगवान ने पिया, इसका भी उल्लेख है। इन सारी बातों का निष्कर्ष यह एक ही है कि मराठी संत कवि नामदेव व हिंदी मे काव्य रचने वाला नामदेव एक ही व्यक्ति था। ये दोनों भिन्न नहीं थे। दोनों में आश्चर्यजनक समानता है। दोनों की कविता, कल्पना, भावना आदि में अपूर्व समानता है। अतः इस निष्कर्ष के विरुद्ध विश्वसनीय आधार मिलने तक यही स्वीकार करना होगा कि मराठी व हिंदी मे रचनायें करने वाला संत नामदेव एक ही व्यक्ति था।

नामदेव के जीवन के ये विवादग्रस्त विषय इतनी प्रबलता से क्यों रखे गये, इसका उत्तर सहज सरल है। डकैती के उल्लेख व संदर्भ के अभंगों और अन्य संतों व कवियों द्वारा इन घटनाओं का उल्लेख नहीं करने से पहले प्रश्न को प्रमुखता मिली। स्वयं नामदेव द्वारा रचित माने जाने वाले आत्म-चरित में वे अपने बाद के जीवन के बारे में पूर्णतया मौन हैं। इसी कारण ये प्रश्न खड़े हो गये कि नामदेव पंजाब में गये थे या नहीं और हिंदी रचनायें किसी और नामदेव की हैं। सबसे बढ़कर बात यह हुई कि नामदेव के काव्य में कबीर आदि का उल्लेख आता है। जबकि कबीर नामदेव के बाद में हुए थे। इन बातों के कारण विवाद खड़े हो गये। पर अभी तक उपलब्ध आधारों पर से

लेखक का यह मत है कि नामदेव न लुटेरे थे और न वे दो अलग-अलग व्यक्ति थे।

इन दो तीन विवादग्रस्त विषयों की बात अलग रखकर नामदेव के जीवन चरित पर विचार करना आवश्यक है। उनका एक आत्म-चरित उपलब्ध है। प्रायः समस्त प्राचीन पोथियों में वह मिलता है। उनमें अभंगों की संख्या व क्रम में भिन्नता हैं। पर इन समस्त हस्तलिखित पोथियों का समय साधारणतः सत्रहवीं शताब्दी है। सत्रहवीं शताब्दी में सम्बन्धित लेखकों को जो जानकारियां उपलब्ध हुई थीं और तब समाज में जो बातें फैली हुई थीं, उनके ही आधार पर उन्होंने आत्म-चरित पद्धति पर उक्त काव्य ग्रंथ लिखा है। इस ग्रंथ में वर्णित बातों पर इसी कारण विश्वास किया जा सकता है।

नामदेव जाति से दर्जी थे। स्वयं उन्होंने अपने एक अभंग में इसका उल्लेख किया है। एक अन्य अभंग में उन्होंने कहा है कि मैं कपड़े सीता हूं व उन्हें बेचने बाजार में ले जाता हूं। [यह उल्लेखनीय है कि पंजाब के नामदेव भी दर्जी जाति के ही थे] नामदेव की मां का नाम गोणाई व पिता का नाम दामा सेठी था। गोणाई व दामा सेठी का विवाह नरसी नामक गांव में हुआ होगा व विवाह के बाद थोड़े दिन वे वहां रहे भी होंगे।

नामदेव की पत्नी का नाम था राजाई। चार पुत्र थे — नारा, विठा, गोंदा व महादा। इनकी पत्नियों के नाम थे — लाड़ाई, गोडाई, येसाई व साखराई। नामदेव की बहिन का नाम आऊबाई व पुत्री का नाम लिंबाई था। एक अन्य जानकारी के अनुसार बहिन का नाम लिंबाई व पुत्री का नाम आऊबाई था। इन सबने अभंगों की रचना की थी। नामदेव की दासी जानाबाई की रचनायें बहुत श्रेष्ठ हैं। उनका काव्य सौंदर्य अपूर्व है।

नामदेव का वंश लाड़ाई के मुकुंद नाम के पुत्र से आगे चला होगा। अन्य पुत्रों की वंशावलियां उपलब्ध नहीं है। संभावना इस बात की है कि वे होंगी ही नहीं। नामदेव की माता गोणाई ने एक अभंग में कहा है कि, "मेरा एक ही पुत्र है।" इस से पता चलता है कि नामदेव का कोई भाई नहीं था। लाड़ाई के एक अभंग के अनुसार नामदेव के समस्त कुटुम्बियों ने एक साथ समाधि ली थी। ऐसा क्यों हुआ व नामदेव सहित सारे कुटुम्बीजन एक साथ मर गये, इसका कहीं कोई कारण नहीं मिलता। लेकिन इस घटना की सत्यता के बारे में संदेह है। संभावना इस बात की है कि ऐसी कोई घटना नहीं घटी होगी, डा० है० वि० ईमानदार ने अपने 'ग्रंथ संत नामदेव' में लिखा है कि इस बात की सम्भावना है कि नामदेव के बाद उनका एक पुत्र जीवित रहा होगा। इतने बड़े परिवार की आर्थिक स्थिति भी साधारण ही रही होगी।

नामदेव बचपन से ही भक्त थे। पर उनके जीवन चरित से पता चलता है कि सांसारिक उत्तरदायित्वों को वे अच्छी तरह से पूर्ण नहीं करते थे। भक्ति की अधिकता के कारण माता-पिता व पत्नी की अपेक्षायें वे पूरी नहीं कर सके थे। इतना होने पर भी तुकाराम व नामदेव के गृहस्थ जीवन में एक उल्लेखनीय अंतर है। नामदेव की पत्नी पहले उनसे चिढ़ी और ऊबी हुई थी पर बाद में दिखता है कि वह उनसे संतुष्ट ही थी क्योंकि नामदेव के कारण ही उसे साक्षात् भगवान के दर्शन हुए थे।

नामदेव ने ज्ञानदेव के साथ कई बार तीर्थयात्रा भी की थी। नामदेव [illegible] तीर्थ स्थानों [illegible] गये थे। ज्ञानदेव द्वारा [illegible] के समय नामदेव [illegible]

की थीं। उन दोनों में बड़ा स्नेह था। ज्ञानदेव के बाद वे पंजाब की ओर बढ़ गये। इसके बाद से उनका सम्पूर्ण जीवन अज्ञात है। केवल उनकी समाधि लेने की घटना ही सर्वविदित है। उन्होंने पंढरपुर के प्रसिद्ध विट्ठल मंदिर की सीढ़ी पर समाधि ली थी।

नामदेव के इष्टदेव व गुरू के बारे में भी मत विभिन्नता है। विट्ठल उनके देवता थे। यह बात बहुत स्पष्ट है, पर उसे लेकर भी छोटा-मोटा विवाद अवश्य चला है। अन्य देवताओं की बात को लेकर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया गया है कि नामदेव दो थे। बात यह है कि नामदेव की हिंदी रचनाओं में 'राम' का नाम अधिक आया है, जबकि मराठी अभंगों में विट्ठल के नाम की अधिकता है। पर हिंदी रचनाओं में विट्ठल का नाम और मराठी रचनाओं में राम का नाम भी आया है। इतना ही नहीं, नामदेव ने राम, कृष्ण, शंकर आदि देवताओं का मराठी में व राम, विट्ठल नरहरि, नारायण आदि देवताओं का हिंदी रचनाओं में उल्लेख किया है। अतः देवताओं के नाम के प्रयोग को लेकर दो विभिन्न नामदेव होने की बात भी अपने आप निराधार हो जाती है। परंतु विट्ठल नामदेव के कुल देवता हैं। नामदेव का जन्म मनौती के बाद हुआ था। उनके माता-पिता ने उनके जन्म के लिए विट्ठल की मानता की थी। संत चरित लेखक महिपती ने अपनी एक रचना में इस बात का उल्लेख किया है कि पुत्र के लिए नामदेव के माता-पिता ने पंढरपुर के विट्ठल की मनौती ली थी, कुल देवता पंढरपुर के विठोबा का जितना अधिक वर्णन नामदेव के मराठी अभंगों में मिलता है, उसका सौवां भाग भी उनके हिन्दी पदों में नहीं मिलता, इन सारी बातों से यही निष्कर्ष निकलता है कि नामदेव के इष्ट देव पंढरपुर के विठोबा ही थे।

नामदेव के गुरू के बारे में कोई विशेष विवाद नहीं है। केशव शब्द का प्रयोग उन्होंने भगवान के साथ ही गुरू के लिए भी किया है, यह बात अवश्य विचारणीय है। नामदेव के गुरू थे प्रसिद्ध संत विसोबा खेचर। उनकी गुरू से हुई पहली भेंट के बारे में यह रोचक आख्यायिका प्रसिद्ध है:

एक बार संतों के एक समूह में गोरा कुम्हार ने नामदेव को 'कच्चा मटका' कहा। मुक्ताबाई ने गोरा कुम्हार के मन में पैदा हुए भक्ति के गर्व को पहचाना व उसका उपहास कर बात समाप्त करने का प्रयत्न किया। तब नामदेव ध्यानस्थ हो गये थे व बाद में ज्ञानदेव के कथनानुसार विसोबा खेचर के पास गये। विसोबा था तो विक्षिप्त पर ज्ञानी भी था। नामदेव उसके पास पहुंचे तब वह शिवलिंग पर पैर रखकर सो रहा था। यह देखकर नामदेव को बड़ा आश्चर्य हुआ व क्रोध भी आया। उन्होंने विसोबा से कहा—'शिवजी पर से पैर हटाओ।' इस पर विसोबा ने उत्तर दिया—'जहां भगवान नहीं हो, उस जगह पर मेरे पैर रख दे।'

ये शब्द सुनते ही नामदेव को सत्य का साक्षात्कार हो गया। उनकी आंखें खुल गई। इसके बाद विसोबा से नामदेव ने गुरूमंत्र लिया। इस विसोबा खेचर के गौरवर्ण का उल्लेख मराठी व हिंदी रचनाओं में कई स्थानों पर मिलता है।

2. नामदेव का समय

नामदेव का जीवन काल सन् 1270 से 1350 तक का है। तत्कालीन समय व परिस्थितियों का परिणाम नामदेव के जीवन पर पड़ा ही होगा। इसके साथ ही यह भी निर्विवाद है कि नामदेव ने भी तत्कालीन समय को प्रभावित किया था। नामदेव के साहित्य व कृतित्व का मूल्यांकन करने के लिए यह आवश्यक है कि उनके समय पर एक नजर दौड़ा ली जाये।

नामदेव ने कई तीर्थ स्थानों की यात्रायें की थीं। जीवन के उत्तरार्द्ध में उन्होंने भारत का भ्रमण भी किया था। इस कारण महाराष्ट्र से बाहर के भारत के जीवन का अनुभव उन्हें हुआ ही होगा। परिणाम स्वरूप उत्तर भारत के ही संदर्भ में मुसलमानों द्वारा मन्दिर व मूर्तियां तोड़ने का उल्लेख उनके अभंगों. में आया है।

नामदेव के समय में महाराष्ट्र में सामाजिक जीवन की दो परस्पर विरोधी धारायें बह रही थीं। नामदेव के जीवन में पूर्वार्द्ध में महाराष्ट्र की सत्ता यादव राजाओं के हाथों में थी। इनकी राज्य व्यवस्था बहुत अच्छी थी। इन राजाओं का गुणगान स्वयं ज्ञानदेव ने किया है। ज्ञानदेव कहते हैं —'ये राजा न्यायी व समस्त कलाओं के आश्रयदाता थे'। श्री द० स० गोडसे ने अपने ग्रंथ 'पोत' में इस काल को अवनति व पतन का बताया है। न्यायमूर्ति एम.जी. रानडे के ग्रंथ 'दि राइज आफ मराठा पावर' के अनुसार हिन्दू-अहिन्दू, ऊँच-नीच, शिक्षित-अशिक्षित आदि सब लोगों पर तब धर्मांधता का बुखार चढ़ा था। वहीं दूसरी ओर इतिहासाचार्य राजवाड़े कहते हैं कि 'भोग-विलास के दलदल में समाज फंसा था और परमार्थ के नाम पर स्वार्थ का बोलबाला था।' परस्पर विरोधी ये निष्कर्ष आशचर्यजनक है। धार्मिक जीवन में यज्ञ आदि की समाप्ति हो गई थी और भक्ति पंथ का उदय सारे भारत में हो रहा था। बिहार के संत गोरक्षनाथ ने महाराष्ट्र में आकर नाथ सम्प्रदाय की स्थापना कर दी थी। विभिन्न देवी-देवताओं की अराधना के कारण विभक्त समाज को एकता का संदेश देने का कार्य नाथ सम्प्रदाय ने किया।[1] देवताओं की अनेकता के कारण समाज अस्त व्यस्त हो गया था। ऐसी स्थिति में भगवान के मूल स्वरूप में ही परिवर्तन हो जाता है। परिणामस्वरूप जैसे मनुष्यों में सज्जन व दुर्जन होते हैं, वैसे ही भगवान के भी प्रकार कर दिये जाते हैं। म्हनोबा, जारवाई, जोरवाई, म्हैसे जैसे नीच वृत्तियों के देवताओं की कल्पनायें पतित समाज में तेजी से बढ़ने लगती है। संस्कृति की कल्पना में धर्म, देवी-देवता, पाप-पुण्य, पूर्वजन्म पुनर्जन्म, मोक्ष, स्वर्ग जैसी बातों का समावेश होता है। इसी प्रकार कला, उद्योग, जात-पांत, विवाह की विधियां, आदि सामाजिक कल्पनायें भी अपना महत्व रखती हैं।

---

1. प्रा० न० र० फाटक कृत "ज्ञानेश्वर आणि ज्ञानेश्वरी"

ऐसा दिखता है कि नामदेव के समय में देव-धर्म, भोग-मोक्ष व सामाजिक रीति-रिवाजों आदि की कल्पनायें दोहरी थीं। तब ब्राह्मणों की गणना श्रेष्ठ वर्ग में होती थी। स्वर्ग व मोक्ष के द्वार सामान्य लोगों हेतु खोलने के लिए विभिन्न वृत्तों व कर्मकांड आदि पर जोर देकर यह ब्राह्मण वर्ग अपना महत्व बढ़ा रहा था। यह सारा धर्म व्यवहार संस्कृत भाषा से कसकर बंधा था और अन्य लोगों के लिए संस्कृत बहुत कठिन थी। सब दूर के संत इस स्थिति को बदलना चाहते थे। इसी भावना के कारण भारत में अर्वाचीन भाषाओं का जन्म हुआ। लोगों की आध्यात्मिक भूख शांत करने के लिए उनकी भाषा में ही इन संतों ने धर्म का वर्णन करना शुरू किया। यह एक बहुत बड़ी क्रांति थी। इस क्रांति के प्रारंभिक समय में ज्ञानदेव व नामदेव हुए थे। ज्ञानेश्वरी| के द्वारा ज्ञानदेव ने यह बहुत अच्छी तरह से समझा दिया कि तत्व ज्ञान कितना सुलभ व सुन्दर है। इसी प्रकार भावपूर्ण काव्य के द्वारा ज्ञान कितनी सरलता से जन मानस में बैठाया जा सकता है, यह कठिन कार्य नामदेव ने बड़ी सरलता से सम्पन्न किया।

देखा जाय तो ज्ञानदेव, नामदेव व समकालीन सन्तों ने ही मराठी-भाषी महाराष्ट्र का निर्माण किया है। ये ही उस काल के इस 'मरहाट' देश के विधाता माने जा सकते हैं। निर्माण की यह प्रक्रिया आगामी दो सौ वर्षों तक चलती रही। बहिणाबाई ने अपने एक अभंग में इसी बात को बहुत अच्छी तरह से कहा है। उन्होंने कहा है कि सन्त कृपा हुई और भवन का निर्माण हो गया। ज्ञानदेव ने उस मन्दिर की नींव रखी। नामदेव ने उसका विस्तार किया। अन्य सन्तों ने खम्भे रखे। तुकाराम उस मन्दिर के कलश बने। बहिणाबाई फड़कती हुई ध्वजा के समान हैं।

इस धार्मिक सुधार को प्रोत्साहन भगवान की प्रेरणा से ही मिला होगा। पर यह तो सम्भव नहीं था कि भगवान के समान उनके भक्त भी शांत रहते। भगवान व देवता को मानने वालों के भिन्न-भिन्न पंथों का निर्माण हो गया। शैव व वैष्णव पंथों का निर्माण पहले हुआ पर बाद में उनके स्वरूपों में भारी परिवर्तन हो गया। वैदिक अवैदिक भेद भी कहीं-कहीं हो गये। सोलहवीं शताब्दी के अन्त में वारकरी, महानुभाव, दत्त, गणपति, राम आदि देवताओं को माननेवालों के पंथ महाराष्ट्र में थे। यह कहा जा सकता है कि इनमें से वारकरी व महानुभाव पंथ नामदेव के समय के महाराष्ट्र में थे। नामदेव व वारकरी सम्प्रदाय के देवता विट्ठल हैं। पर इस पंथ में विष्णु, कृष्ण, विट्ठल का एकीकरण हो गया दिखता है। नामदेव के पहले से चले आ रहे इस पंथ को स्थिरता, प्रतिष्ठा व लोकप्रियता ज्ञानदेव व नामदेव ने ही दिलाई। इस पंथ को ग्रंथ की शक्ति ज्ञानेश्वरी ने प्रदान की। नामदेव ने कीर्तन द्वारा इस पंथ की नींव पक्की कर उसे अपार लोकप्रियता प्राप्त करा दी। इतना ही नहीं, अध्यात्मज्ञान की समृद्धि करा देने की ज्ञानदेव की प्रतिज्ञा पूर्ण करने में नामदेव ने भरपूर सहयोग दिया।

नामदेव ने ज्ञानेश्वरी की भरपूर प्रशंसा की है। इस वारकरी सम्प्रदाय का केन्द्र पंढरपुर था। पर बाद में ज्ञानदेव के कारण आलंदी, एकनाथ के कारण पैठण व तुकाराम के कारण देहू-इन तीन नये श्रद्धा-स्थानों का निर्माण हो गया। आषाढ़ी एकादशी उनका महत्वपूर्ण दिन है पर दूर गई मूर्ति की स्थापना पुंडलिक द्वारा किए जाने के बाद से कार्तिक की एकादशी भी वारकरियों का महत्वपूर्ण दिन बन गया। पंढरपुर की यात्रा इन दोनों एकादशियों को अभी भी श्रद्धालु भक्तों द्वारा की जाती है और लाखों भक्त इन अवसरों पर वहां एकत्रित होते हैं। कीर्तन, प्रवचन आदि के द्वारा तत्व चिंतन, गले में

तुलसी की माला, मस्तक पर गंध का तिलक, आदि आचार धर्म का पालन वारकरी सम्प्रदाय में किया जाता है। नामदेव ने इस सम्प्रदाय को महाराष्ट्र में बहुत अधिक फैला दिया था।

भारत में राष्ट्रवाद का उदय होने में अभी देर थी। आज हम जिसे राजनीति कहते हैं, वह तब अस्तित्व में ही नहीं थी। धर्म ही सबसे प्रभावी व महत्व की बात थी। मुसलमानों के आक्रमण तब शुरू हो गये थे पर धर्म की दृष्टि से देश का धर्म तब हिंदू धर्म ही था। धर्म में विचार व आचार को महत्व प्राप्त है। महाराष्ट्र में नामदेव के समय में विचार प्रणाली के बारे में कोई विवाद था ही नहीं। ज्ञानदेव व नामदेव जैसों ने भी धार्मिक सिद्धांतों के विरोध या विद्रोह की कहीं कोई बात नहीं की। लेकिन आचार धर्म बहुत विभक्त, स्वार्थी व मनुष्यों में खाई पैदा करने वाला बन गया था। नामदेव आदि संतों ने इस आचार धर्म का जमकर विरोध किया। धर्म के तत्वों पर आचरण करने से भक्ति, ज्ञान, योग आदि सतमार्गों का निर्माण होता है। समाज की शक्ति को ध्यान में रखकर नामदेव ने भक्ति मार्ग का प्रसार किया। उस शताब्दी में पूरे भारत में ही भक्तिमार्ग की लहर फैली हुई थी। वह भक्ति-शताब्दी ही थी। इस अखिल भारतीय आध्यात्मिक आन्दोलन से नामदेव का घनिष्ट सम्बन्ध था। यह कहना अनुपयुक्त नहीं होगा कि राजस्थान, पंजाब आदि प्रान्तों मे भक्ति मार्ग की हलचल नामदेव ने ही शुरू की। यह निर्विवाद है कि उस काल के संदर्भ में नामदेव ने अपने कर्तृत्व से एक महत्वपूर्ण संत का गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था।

3. नामदेव का ग्रंथ वैभव

ज्ञानदेव ने ज्ञानेश्वरी, अमृतानुभव, चांगदेव सष्टी आदि छोटे-बड़े ग्रंथ व करीब 800 अभंग लिखे थे। मराठी में अभंगों के संग्रह को "गाथा" कहते हैं। ज्ञानदेव के समान ही नामदेव की रचनायें विविधता लिए हुए हैं। नामदेव ने भक्ति संप्रदाय के प्रमुख ग्रंथ श्रीमद् भागवत् का रूपान्तर किया था। भावार्थ रामायण, रुक्मणी स्वयंबर, कूट व अभंगों के रूप में उन्होंने विविधतापूर्ण व विशाल साहित्य की रचना की है।

संत तुकाराम ने अपने एक अभंग में कहा है कि नामदेव ने सौ करोड़ अभंग लिखने की प्रतिज्ञा की थी। एक अन्य अभंग में तुकाराम ने कहा है कि नामदेव ने उन्हें स्वप्न में दर्शन देकर अभंग की प्रेरणा दी थी।

तुकाराम बुवा ने सौ करोड़ अभंगों का किसी तरह हिसाब जमाने का प्रयत्न किया है। उन्होंने नामदेव के माता-पिता, चार पुत्रों, उसकी पत्नियों बहिन व स्वयं नामदेव द्वारा रचित सारे अभंगों की संख्या जोड़ डाली थी। पर फिर भी वह सौ करोड़ नहीं होती। तुकाराम का यह गणित हास्यास्पद ही हैं। अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए ही नामदेव ने तुकाराम को स्वप्न में अभंगों की रचना करने का निवेदन किया होगा।

नामदेव रचित अभंगों की कुल संख्या तीन हजार से अधिक नहीं है। नामदेवांच्या गाथा [नामदेव की गाथा] में अभंगों की संख्या 2548 है। आवटे के संग्रह में 2375 सकल संत गाथा में 2373, जोग के संस्मरण में 2371 व गोंवलेकर के समूह में 1574 अभंग है। महाराष्ट्र द्वारा प्रकाशित गाथा में 2392 अभंग है। कुछ अभंगों के बारे में यह विवाद भी है कि वे नामदेव द्वारा रचित नहीं है। ऐसे विवादास्पद अभंगों की संख्या भी यदि जोड़ ली जाये तो नामदेव के अभंगों की संख्या तीन हजार से अधिक होती ही नहीं। इस स्थिति में तुकाराम द्वारा कही गई नामदेव द्वारा रचित शतकोटि अभंगों की बात का या तो अर्थ ही दूसरा होगा या यही कहा जावेगा कि नामदेव के करोड़ों अभंग नष्ट हो गये। अन्य आधारों के अभाव में हमें यही स्वीकार करना होगा कि तीन हजार अभंग ही नामदेव ने रचे थे और यह ही उनकी सम्पूर्ण काव्य सम्पदा है।

उपरोक्त जानकारी से यह महत्वपूर्ण बात सामने आ गई कि नामदेव ने तीन हजार से अधिक अभंग नहीं लिखे थे। इस संख्या में नामदेव की छाप वाले अन्य कवियों के अभंग भी मिले हुए हैं। मराठी साहित्य में नामदेव नाम के कुछ और कवि हो गये हैं। उनमें से कुछ हैं—नामदेव, नामा शिंपी, नामा यशवंत, नामा पाठक, विष्णुदास नामा आदि। इनमें नामदेव व विष्णुदास नामा के ही अधिकांश अभंग हैं। अन्य कवियों की रचनायें बहुत कम हैं।

नामदेव संबंधी जो प्रश्न अभी तक उलझे हुए हैं, उनमें नामदेव रचित अभंग व उनकी संख्या

भी है। इस उलझन का मुख्य कारण यह है कि इन दोनों ने 'नामा विष्णुदास' व विष्णुदास नाम की छाप से रचनायें की हैं। दोनों श्रेष्ठ कवि हैं। दोनों की रचना शैली कई जगहों पर एक जैसी ही है। इन दोनों नामदेवों में से विष्णुदास नाम्या ने महाभारत पर मराठी में कविता लिखी है। डा० सरोजिनी शेंडे ने अपने ग्रंथ "विष्णुदास नाम्या च्या महाभारताचा विवेचनात्मक अभ्यास" में यह निष्कर्ष निकाला है कि नामदेव नाम के दो भिन्न कवि हुए हैं। संत नामदेव ने "विष्णुदास" का उपयोग अपनी रचनाओं में विश्लेषण के रूप में किया है जबकि दूसरे नामदेव ने "विष्णुदास का उपयोग अपने नाम के लिए किया है"। पर यह निष्कर्ष भी मूल समस्या को सुलझाने में अधिक उपयोगी सिद्ध नहीं होता। भाषा में थोड़ी संस्कृत प्रचुरता, कल्पना प्राचुर्य व यादवकालीन मराठी भाषा के नहीं होने से उन रचनाओं में अवश्य भिन्नता है। पर यह कोई प्रमुख आधार नहीं माना जा सकता।

सारे आधारों का निष्कर्ष यही है कि नामदेव रचित अभंगों की संख्या तीन हजार से अधिक है ही नहीं। गाथा में कई अभंग दो या तीन बार संकलित हो गये हैं, इस कारण भी अभंगों की संख्या व्यर्थ ही बढ़ गई है। दूसरी बात यह कि नामदेव का समय सन् 1270 से 1350 तक तय हो जाने के बाद इस समय के बाद हुए संतों के बारे में लिखने वाला व्यक्ति संत नामदेव हो ही नहीं सकता। इसीलिए संत नामदेव के बाद हुए कबीर, नरसी मेहता, आदि संतों का वर्णन करने वाला व्यक्ति कोई दूसरा ही नामदेव था।

इस प्रकार संत नामदेव के बाद हुए नामदेव नाम के कवियों की रचनाओं के कारण नामदेव के नाम पर रचित अभंगों की संख्या निरंतर बढ़ती ही गई। विद्वानों का मत है कि नामदेव ने केवल दो हजार अभंग ही रचे थे। कुछ लेखकों ने यह संख्या केवल पांच सौ से सात सौ तक ही बताई है। इस लेखक का मत भी बहुत कुछ ऐसा ही है। फिर भी प्रथम नामदेव ने दो हजार से अढ़ाई हजार तक अभंगों की रचना की होगी, यह मान लेना चाहिए।

ओवी के ही अंतर्गत अभंग का एक प्रकार होता है। ओवी गेय नहीं होती जबकि अभंग गाया जाता है। गाथा में ओवी पद्धति के अभंगों में बहुत सा चरित लेखन किया गया है। नामदेव ने अपने समकालीन कुछ संतों के छोटे-मोटे प्रसंग चरित लिखे हैं। ज्ञानेश्वर के बड़े ही मनभावन जीवनचरित के सिवा राम, कृष्ण व पौराणिक काल के कुछ भक्तों के चरित भी उन्होंने लिखे हैं। उनका स्वयं का जीवनचरित भी उनके द्वारा रचित बताया जाता है। ये सारे चरित मिलाकर गाथा के तीसरे हिस्से से अधिक ही हैं। पंढरपुर व भगवान विट्ठल के विषय में नामदेव ने श्रद्धाभक्तिपूर्वक जो कुछ लिखा है, उसका एक अलग विभाग ही है। नामदेव की हिंदी रचनायें भी बड़ी संख्या में हैं पर उन रचनाओं में पंजाबी व मराठी भाषाओं का मिश्रण है। उनकी हिंदी की करीब तीन-साढ़े तीन सौ रचनायें अभी तक प्रकाशित हुई हैं। इनके सिवा स्फुट अभंगों का भी एक बड़ा विभाग है। इन स्फुट रचनाओं में भाव, भक्ति, ज्ञान, सूक्ष्म अवलोकन आदि के मनोहर दर्शन होते हैं। इन स्फुट रचनाओं में भी नामदेव कृत रचनायें नहीं हैं। पर इस विभाग के अभंगों के नामदेव कृत होने पर अधिक शंकायें उपस्थित नहीं की गई हैं। संशोधकों ने अन्त: प्रमाण के आधार पर रचनाओं को नामदेव रचित या अन्य किसी की मान लिया है। कुछ ने यादवकालीन भाषा को कसौटी माना है। अन्य कुछ ने यादवकालीन संतों के साहित्य के विषयों पर तो कुछ ने शैलियों के आधार पर रचनाओं का वर्गीकरण किया है। उनके अनुसार नामदेव की वाणी संस्कृत प्रचुर व अलंकारों से

सुशोभित हैं। उन सबका आशय यही है कि यह एक सर्वमान्य बात है कि गाथा के सारे अभंग नामदेव के नहीं है। लेकिन कौन से अभंग विश्वासपूर्वक नामदेव के ही हैं, यह निर्धारित करने का कोई मापदण्ड अभी तक विद्वान निर्धारित नहीं कर सके हैं।

इस लेखक के अनुसार बहुत से स्फुट अभंग, पंढरी माहात्म्य, विट्ठल महात्म्य व बालक्रीड़ा इतना ही नामदेव का साहित्य होना चाहिए। अन्य लेखन नामदेव का नहीं है। आत्मचरित प्रकरण को भी हटा देना ही उचित होगा। यह पुस्तक केवल परिचयात्मक है, अतः साहित्य सम्बन्धी गहराईयों का विस्तार यहां सम्भव नहीं है। हर मराठी कवि ने श्रीकृष्ण-लीला का वर्णन किया है। इस दृष्टि से नामदेव द्वारा बालक्रीड़ा के रूप में श्री कृष्ण का चरित्र लिखना सम्भव लगता है। उनके ज्ञानेश्वर चरित के तीन भाग हैं—आदि, तीर्थावली, समाधी। इनमें साहित्यिक वैभव प्रचुर मात्रा में है। नामदेव का ज्ञानेश्वर के प्रति प्रेम व आदर, नामदेव को ज्ञानेश्वर का सहन नहीं होने वाला विरह, इन दोनों श्रेष्ठ संत कवियों में हुई आपस की तत्व चर्चा व भावपूर्ण कविताओं की रचना आदि का बहुत ही रसमय वर्णन इस चरित में है। हठ योग व शुद्ध भक्ति योग में समान सामर्थ्य बताने का प्रयत्न भी इसमें वर्णित है। इस प्रकरण में कई अभंगों में नामदेव की छाप नहीं है। कुछ अभंगों के अन्त में ज्ञानदेव, निवृत्ती सोपान आदि विविध संतों का उल्लेख किया गया है। पर ये अभंग उन संतों के नहीं है।

दूसरी बात यह है कि इस प्रकरण की शैली अभंग की नहीं वरन् ओवी पद्धति की है। पर यह सही है कि प्रकरण का काव्य भावपूर्ण व भावनायें तेजस्वी व हृदयस्पर्शी हैं। इतना होने पर भी समाधी, तीर्थावली, आदि यह सारा साहित्य संत नामदेव का नहीं है। इसके दो प्रमुख कारण हैं। एक तो यह कि जिसने आत्मचरित लिखा होगा, उसने ही ये सारे चरित लिखे होंगे। इस पुस्तक में पहले ही यह बताया जा चुका है कि आत्मचरित नामदेव ने नहीं लिखा। दूसरा यह कि इस बात के पर्याप्त आधार हैं कि वे चरित अनुमानों के आधार पर लिखे गये हैं। उदाहरणार्थ ज्ञानदेव की समाधि का काम नामदेव के चारों पुत्रों द्वारा करने का वर्णन उसमें है। लेकिन ज्ञानदेव द्वारा समाधि लेने के समय नामदेव की उम्र केवल पच्चीस वर्ष के आसपास थी। अतः उनके चार पुत्रों की उम्र तब इतनी अधिक होना सम्भव ही नहीं है। चरित में भावपूर्ण व काव्यमय कुछ प्रसंग अवश्य हैं, फिर भी उक्त रचना नामदेव की है ही नहीं।

ज्ञानदेव द्वारा समाधि लिये जाने के बाद उनसे एक बार प्रत्यक्ष मिलने की उत्कट इच्छा नामदेव की हुई थी। भगवान ने उनकी वह इच्छा पूर्ण भी की थी। इस घटना से सम्बन्धित एक प्रकरण उक्त आत्मचरित में है। इस प्रकरण की शैली हास्यजनक व तीर्थावली प्रकरण के समान है। इसमें कुछ और भी अंश है जो नामदेव रचित नहीं लगते और इसी कारण उन्हें हटाना पड़ा है।

काव्य पर विचार करते समय उच्च कोटि की कई रचनाओं को भी हटाना पड़ा है। शिवरात्रि माहात्म्य व शिव स्तुति नाम के प्रकरण में हरिणी व पारधी की कथा बड़े ही आकर्षक ढंग से कही गई है। कैलाश के भोले चक्रवर्ती शिवजी, कैलाश पर्वत का सौंदर्य, गर्भिणी हरिणी आदि के बारे में बड़ा ही मनभावन वर्णन है। कुछ अभंगों में विचार प्रवर्तक सूत्रबद्ध सिद्धांतों की छटा देखते ही बनती है। एक अभंग में उन्होंने लिखा है—

एक अन्य अभंग का सार यह है—धर्मशास्त्रों की बातें सब जानते हैं। पर उनका मर्म कोई नहीं

समझता। शिष्यों द्वारा किए गये पापों का फल गुरू भोगता है। स्त्री-पुरूष लेन-देन में लगे हैं। नामदेव कहते हैं—सारे लोग माया में उलझे हुए हैं और अन्त में संसार सागर की लहरों में गोते खाते रहते हैं।

इस अंभग के सूत्रबद्ध सिद्धांत विचार प्रर्वतक है। पर यह अभंग भी नामदेव का नहीं है। इसलिए उसके काव्य सौंदर्य व उपदेश की ओर दुर्लक्ष करना पड़ता है। यही बात उसके एक और अतिप्रसिद्ध अभंग—नामाचा महिमा कोण जाणे..सीमा [नाम महिमा की सीमा कौन जानता है] पर भी लागू होती है। उसकी रचना, भाव आदि सब नामदेव के ही हैं। पर जिस प्रकरण में उक्त अभंग है, वह पूर्ण प्रकरण ही संशयास्पद है इसीलिए बड़ी कठिनाई की स्थिति बन गई है। उक्त "नामाचा महिमा कोण जाने सीमा" बहुत ही सरस-सुन्दर अभंग है और नामदेव द्वारा रचित लगता भी है पर जहां वह आया है, उस प्रकरण में से उसे बाहर निकाल लेने पर उसे नामदेव रचित मानना कठिन है। पर ऐसे संशयास्पद अभंगों का कुछ ऐतिहासिक महत्व अवश्य रहता हैं। उनसे कुछ एतिहासिक सत्यों के आधार प्राप्त होते है जो बहुत उपयोगी होते है। उदाहरणार्थ ऐसे ही अंभग में निवृत्तिनाथ द्वारा द्वादशी को समाधि लेने की तिथि लिखी है। इस उल्लेख से निवृत्तिनाथ की समाधि का समय निश्चित किया जा सकता है। ये रचनायें नामदेव रचित नहीं हैं, यह निर्धारित हो जाने से नामदेव के काव्य की ही अधिक हानि होगी क्योंकि इन रचनाओं में कई स्थानों पर सुन्दर भावों के दर्शन होते हैं। इस प्रकार के संशयास्पद अभंगों को दूर रखना ही उचित होगा। इन अभंगों को ठोस आधारों की प्रतीक्षा रहेगी।

नामदेव के नाम की अनेक कूट रचनायें भी मिलती है। इनके अर्थ गूढ़ आध्यात्मिक है। पर अच्छे विद्वान भी दावे के साथ नहीं कह सकते कि उन्होंने इनके अर्थ जान लिए है। भले ही इन अभंगों का अर्थ समझ में नहीं आवे पर उनकी भाषा व रचना-सौंदर्य मन को बहुत प्रभावित करता है। इस प्रकार की एक कूट रचना है—**"राई एवढे पांखरु त्रिभुवनी त्याचा फेरा रे।"**इस रचना का भावार्थ इस प्रकार है:

राई के आकार का पंछी है। तीनों लोकों में वह फेरा करता है। नर और नारी इस पंछी का आहार है। पिंड में स्थित उस पंछी की तुम खोज करो। मेरु के शिखर पर उस पंछी का बसेरा है। संसार में आकर तुम उसका अनुभव करो। चौरासी लाख योनियां व पूरा जन्म समाप्त हो जावेगा।

इस रचना में शैली की तीव्रता का सहज अनुभव होता है। इस कूट का अर्थ अभी तक जाना नहीं जा सका। कुछ विचारकों का कथन है कि ये कूट रचनायें नामा शिंपी नामके अन्य नामदेव की हैं क्योंकि साधारणता ऐसी कूट रचनायें नामदेव ने नहीं की हैं। परन्तु यह कथन भी पूर्णरुप से सत्य नहीं है। स्वयं ज्ञानदेव आदि ने भी ऐसी कूट रचनायें की है। ज्ञानदेव कालीन संतों की एक विशेषता उनकी कूट रचनायें है। अतः नामदेव ने भी ऐसी कूट रचनायें अवश्यै की होंगी। संस्कृत-काल से ही कीर्तन आदि लोकरंजन की कलाओं में इस तरह के कूटों का प्रयोग होता आया है। अतः अन्य आधारों के अभाव में ये कूट रचनायें नामदेव रचित मान ली जानी चाहिए।

नामदेव द्वारा रचित सर्वत्रमान्य कुछ और रचनायें हैं। वे हैं आरतियां व भूपालियां। महाराष्ट्र की संस्कृत में पूर्ण रुप से घुलमिल जाने वाली उनकी एक आरती.."युगे अट्टावीस" है। उसमें विट्ठल की मूर्ति संबंधी आख्यायिका का और भक्तों व उनकी भक्ति का बड़ा ही भावपूर्ण वर्णन है।

"उठा-उठा साधुसन्त" (उठो साधुसन्तों उठो) या " घालीन लोटांगण" (मैं दंडवत करूंगा) में भी श्रद्धालु मन के दर्शन होते है। मराठी में आरती-साहित्य के जनक नामदेव माने जाते है। एकनाथ, मुक्तेश्वर, व रामदास आदि ने आगामी तीन सौ वर्षों में साहित्य के इस अंग को भरपूर समृद्ध बनाया।

4. भगवान और नामदेव

नामदेव पहुंचे हुए भगवत् भक्त थे। उन दिनों मनुष्य के मूलभूत प्रेरणा-स्रोत भगवान ही थे। आज का राष्ट्रवाद या राष्ट्रप्रेम उन दिनों नही था। इसके विपरीत भगवान और धर्म की भावनायें ही जनमानस में गहराई से घर किये हुए थी। नामदेव के काव्य में भगवान व धर्म से सम्बन्धित भावनाओं की अधिकता है। भक्ति के स्वरूप का वर्णन करते समय सगुण व निर्गुण उपासना का प्रश्न सामने आता है। नामदेव शुरू से ही सगुण भक्त थे। भगवान की मूर्ति से उनका एक विशिष्ट नाता बचपन से ही जम गया था। भगवान की मूर्ति ने उनके सामने कटोरी से दूध पिया था और नामदेव का कीर्तन सुनने की अथवा दूसरों का विरोध करने की भावनाओं के कारण भगवान ने उनका पूरा मन्दिर ही गोल-गोल घुमा दिया था। इस से नामदेव का सगुण भक्ति प्रेम स्पष्ट समझ में आता है।

भगवान का वर्णन करते समय नामदेव अधिकतर विट्ठल का ही वर्णन करते हैं। राम के बारे में भी उन्होंने कम लिखा है। वारकरी पंथ में विट्ठल और कृष्ण एक ही हैं इसलिए बाल लीला कृष्णभक्ति का ही गुणगान है।

गोपियां श्रुति हैं व इन्द्रियां गाय हैं। नामदेव ने अपने एक प्रसिद्ध अभंग **परब्रह्म निष्काम तो हर गोलिया घरीं** (वह परब्रह्म निष्काम भगवान इस गवली के घर आया है) में कहा है कि अनेक जन्मों के पुण्य से भगवान मुझे मिल गये हैं अतः उन्हें भक्ति की शक्ति से बांधकर रखना चाहिये।

पंजाब में जाने पर नामदेव ने जो हिंदी रचनायें कीं उनमें विट्ठल का स्तवन प्रमुखता से उन्होंने किया है। विट्ठल याने कृष्ण या माधव। उन्होंने राम का स्तवन भी कई बार किया है लेकिन विट्ठल ही नामदेव के आराध्य देव व भगवान है। वे ही उनके सर्वस्व थे। उनकी दृढ़ धारणा थी कि भवसागर से पार होने के लिए विट्ठल का नाम हृदय में धारण करना चाहिए, विट्ठल ही उपनिषदों का सार है, भगवान सगुण निर्गुणातीत है परन्तु पंढरपुर में वे विट्ठल के रूप में साकार हो गये हैं। पंढरपुर की विट्ठल-मूर्ति का सौंदर्य वर्णन उन्होंने बड़ा ही अनूठा, सुन्दर और भक्तिभावना से ओतप्रोत किया है। वे कहते है—''पंढरपुर में भगवान की मूर्ति के सौंदर्य के सामने बैकुण्ठ में स्थित भगवान का चतुर्भुज रूप भी फीका है। भगवान जो सर्वगुण सम्पन्न हैं वे ही पंढरपुर में खड़े हैं। वहां वे बहुत ही शोभायमान लगते हैं। पंढरपुर में विट्ठल की मूर्ति में सारे सुखों के सुख साकार हो गये हैं।

उनका मन भगवान के सगुण रूप व उसके सौंदर्य पर कितना अधिक रीझा हुआ है, यह उनके अभंग में बहुत ही स्पष्ट है। वे उस अभंग में कहते है जीव विट्ठल है, शिव विट्ठल है, आत्मा विट्ठल है। माता-पिता और सारे सम्बन्धी भी विट्ठल ही है। नाम विट्ठल, रूप विट्ठल।

विट्ठल ही पतित-पावन है

भगवान विट्ठल के विषय में नामदेव ने इस प्रकार बहुत ही ऊँचे भाव प्रकट किये है। नामदेव स्वयं विट्ठल हो गये थे। वे विट्ठल ही थे। उनकी यह स्थिति बहुत ऊंची है। अपने काव्य में अनेक देवताओं का भजन करने वाले नामदेव ने एक स्थान पर गजब की स्पष्टता के साथ कहा है......विट्ठल के सिवा अन्य किसी का भजन मैं नहीं करूंगा, विट्ठल के सिवा अन्य किसी को भगवान भी नहीं कहूँगा, विट्ठल ही मेरे सर्वस्व हैं और विट्ठल ही कलियुग को ठिकाने लगाने के एकमेव साधन हैं।

अन्यत्र वे कहते हैं—"सम्पूर्ण विश्व की आत्मा विट्ठल ही है। मेरी गर्दन भी यदि मरोड़ दी गई तो हरकत नहीं करूंगा, पर विट्ठल के सिवा अन्य किसी भी देवता का मैं नाम नहीं लूंगा।" एक और वे ऐसी कठोर प्रतीज्ञा करते है पर साथ ही अपने अभंगों में राम, शंकर, गणपति आदि की महिमा उन्होंने गाई है। अतः उनका यह हठ कि वे विट्ठल के सिवा अन्य किसी देवता का मैं नाम भी नहीं लूंगा, स्वीकार करने योग्य नहीं है। यह भी कहा जा सकता है कि ऐसा हठ करने वाले नामदेव को ही गोरा कुम्हार ने "कच्चा मटका" कहा होगा। नामदेव की यह अविचल निष्ठा है कि भगवान सर्वशक्तिमान है और उनकी इच्छानुसार ही सब कुछ होता है। भगवान के निकट उन्हें सदैव रहने को मिले, इसलिए नामदेव ने अनेक मधुर कल्पनायें की हैं जिनमें उनकी भक्ति व काव्य-वैभव के अच्छी तरह से दर्शन होते हैं। कुल मिलाकर भगवान व नामदेव का बड़ा ही मोहक, आत्मीयता पूर्ण व चमत्कारिक नाता उनके अभंगों में स्पष्ट दिखाई देता है।

कभी वे भगवान को सर्वशक्तिमान व स्वयं को उनका सेवक मात्र मानते हैं और कहीं वे भगवान को अपने माता-पिता व सम्बधी मानकर वर्णन करते हैं। यह दिखाई देता है कि वारकरी संप्रदाय के समस्त कवियों ने विट्ठल को मां के रूप में माना है। कभी नट के रूप में भगवान का अपने भक्तों को जीवन का नाटक बताने वाला वे बताते हैं तो कहीं भगवान को शाश्वत शांति का निवास मानते हैं। कभी वे भगवान को चोर मानने की बड़ी रोचक कल्पना कर शेखी बघारते हैं कि उन्होंने अपने प्रेम के जाल में भगवान को पकड लिया है और छूटने के लिए वे उनके सामने गिड़गिड़ाते हैं। कभी वे पूछते हैं—क्यों भगवान जरा बताओ तो सही तुम्हारा मुझसे कौनसा बैर है? एक स्थान पर उन्होंने भगवान को घर फोड़ कहकर हलकी सी गाली भी दी है। क्रोध में आकर भगवान को कृष्ण कहकर उनका उपहास भी किया है। अपने समकालीन लोगों की भगवान संबंधी कल्पना उन्हें पसंद नहीं थी इसलिये वे कहते है—भगवान पत्थर के और भक्त प्रेम का है। ऐसे में दोनों का संदेह मिटे भी तो कैसे?

भगवान के विषय में नामदेव के भाव इंद्रधनुष के रंगों के समान सुन्दर और मनभावन हैं एक अभंग में भगवान को वे कृष्ण बताकर कहते हैं—'पहले तुम लोगे, फिर कहीं दोगे। कहीं वे उन्हें बड़ा उदार बताकर कहते हैं—मेरे जैसे साधारण व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति करना उनके लिए बायें हाथ का खेल है। एक अभंग में वे कहते हैं—दाता तो लक्ष्मी का पति है और मेरी मांग उनसे कितनी छोटी है। बादल मूसलाधार बरसते हैं पर चातक को तो केवल दो बूंद पानी चाहिए, गंगाजी अथाह भरी है और मुझे तो एक दो घूंट ही काफी है। शक्कर के ढेर लगे हैं पर चींटी को तो उतनी ही शक्कर चाहिए जितनी उसके मुंह में समाये।'

भगवान के दर्शन नहीं होने पर कभी नामदेव बहुत व्याकुल हो जाते हैं तो कभी वे कहते हैं—जिधर भी देखता हूँ, विट्ठल ही दिखाई देते हैं। मन की किसी विशेष स्थिति में वे बड़ी अधीरता से कहते हैं—हे विट्ठल, मेरा मन जहां-जहां उलझे, वहीं आप आकर निवास करो।

वास्तविकता यह है कि भगवान और नामदेव एक बहुरसयुक्त काव्य ही है। भगवान के दर्शन नहीं हो सकने के कारण दुखी होकर प्राण त्यागने की पीड़ा उसमें कहीं दिखाई देती है तो कहीं भगवान से प्रत्यक्ष भेंट का आनन्द नामदेव इस प्रकार सुनाते हैं—'स्वयं भगवान ने दोनों हाथों से मुझे उठाया और हृदय लगा लिया।' कभी किसी छोटे बालक के समान भगवान के लिए नामदेव सिसकते रहते हैं तो कभी भगवान से वे लाड़ प्यार से मांग करते हैं—'मुझे मेरे विट्ठल का सुन्दर मुख देखने दो।' कभी वे भगवान से बातें करते हैं। वे कहते हैं—अरे पत्थर का भगवान कभी बोलता नहीं।' फिर वे स्वयं उत्तर देते हैं—'बोलने-सुनने वाले दोनों ही मूर्ख हैं। कभी-कभी वे भगवान से वाद विवाद भी करते हैं। वे पूर्ण विश्वास से कहते हैं कि 'मेरे विठोबा आवेंगे और मुझे हृदय से लगावेंगे।' फिर वे स्वयं को भी यही आश्वासन देते हैं।

नामदेव के जीवन में भगवान का स्थान कोई कवि कल्पना नहीं बल्कि एक वास्तविकता थी। उनकी वाणी में भगवान से साक्षात्कार करने वाले एक संत के अनुभव के बोल थे। इसीलिए भगवान का वर्णन जब नामदेव करते हैं तो उन शब्दों के पीछे उनका विश्वास और अनुभव ही बोलता है। नामदेव ने कई बार भगवान का दर्शन किया था। इसमें विशेषता यह थी कि उन्हें भगवान के दर्शन हर बार अलग रूपों में नहीं होते। उन्हें भगवान के दर्शन हमेशा एक ही रूप में होते हैं। नामदेव के भगवान रंग में काले ही हैं। उन्होंने लिखा है —'मेरे भगवान का रंग मेघ के समान काला है।' कहीं-कहीं वे भगवान का रंग सांवला भी बताते हैं। भगवान पीताम्बर पहने रहते हैं। कई स्थानों पर नामदेव ने लिखा है—मेरे भगवान ईट पर खड़े हैं। भगवान गरुड़ पर बैठकर आये हैं। उनके गले में सुगंधित फूलों की माला शोभायमान है। शरीर पर चन्दन का लेप है। गले की माला में अमूल्य रत्न हैं। वे रेशमी वस्त्र पहने हैं, अहीरों की गौवों को चराते हैं। उनके हाथों में वंशी है और वे उसे बहुत मधुर बजा रहे हैं। उनके मस्तक पर मुकुट, कानों में कुंडल और पैरों में भी आभूषण सुशोभित हैं। ऋद्धि सिद्धि, लक्ष्मी व रुक्मणी उनकी सेवा में है। वे बैकुंठ में निवास करते हैं, जो उन्हें स्वर्ग से भी बढ़कर प्रिय है। भगवान का तेज करोड़ों सूर्यों के तेज से बढ़कर है। काकड़ आरती द्वारा उन्हें प्रातः जगाया जाता है और सोते समय शयन आरती होती है। प्रायः उनके लिए विविध वाद्य बजाये जाते हैं और सभा मंडप में कीर्तन होता है। स्वर्ण व रत्नजटित शैया पर वे सोते हैं।

मराठी के समान ही नामदेव की हिन्दी रचनाओं में भी भगवान के स्वरूप भावनाओं व भक्ति का वर्णन है। उनमें अन्तर केवल एक ही है पर वह बड़े महत्व का है। नामदेव अपनी हिन्दी रचनाओं में सगुण की अपेक्षा निर्गुण की ओर अधिक झुके हुए दिखाई देते हैं। एक हिन्दी पद में उन्होंने कहा है — 'सूत एक मणि सत सहस जैसे उति पोति प्रभु सोई।' अर्थात् सहस्त्रों मणियों को एक सूत्र में गूंथ रखने वाले सूत के समान भगवान है। एक अन्य हिन्दी पद में उन्होंने लिखा है — 'जिउ आकौस पंखिअलो खोज निरखउ न जाई। जिउ अलमाझे माछलो मारमु पैखणों न जाई।' अर्थात् पक्षियों व जलचरों के मार्ग का जैसे पता नहीं चलता, वैसे भगवान हैं। एक अन्य हिन्दी पद में

उन्होंने कहा है कि भगवान के निवास का आधार कर्म है, सेज वासुक नाग है और उनके नखों से गंगा अवतरित हुई हैं।

नामदेव की संकलित व प्रकाशित हिन्दी रचनाओं में वर्णित भगवान व भक्ति के तत्व उनकी मराठी रचनाओं से अलग नहीं हैं।

नामदेव की हिंदी रचनाओं में भी उनके मराठी अभंगो जैसी मधुरता है। मराठी रचनाओं में भगवान व नामदेव बचपन के मित्र जैसे लगते हैं: वे खेलते हैं, रूठते हैं, झगड़ते हैं व पक्के मित्रों जैसा व्यवहार करते हैं। कभी-कभी नामदेव एकदम बालक बन जाते हैं। हिन्दी रचनाओं में बालक्रीड़ा के अतिरिक्त कहीं भी भगवान व भक्त का नाता प्रेमी के रूप में वर्णित नहीं किया गया है। माता-पिता भाई समधी आदि सारे नाते हैं, पर ये नाते दिखाई नहीं देते। हिन्दी रचनाओं में कहीं-कहीं प्रेमी व प्रेमिका का नाता भी दिखाई देता है। एक पद में वे कहते हैं—'जिस प्रकार किसी तरुणी का मन उसके पति में लगा रहता है, वैसे ही मेरा मन राम में लगा है। वे कहते हैं—राम मेरे पति हैं, सर्वस्व हैं, उनके लिए मैं उन्हें प्रिय लगने वाले पद रचता हूं और श्रृंगार भी करता हूं। लोग भले ही मेरी निन्दा करें।' उत्तर भारत की इस श्रृंगारिक अथवा मधुर भक्ति के दर्शन मराठी संतों की रचनाओं में बहुत दिखाई देते हैं।

नामदेव के भगवान प्रमुख रूप से विट्ठल या विष्णु या कृष्ण थे। पर उनके अभंगों में राम, शिव, गणपति आदि का भी वर्णन है। नामदेव का काल श्रद्धा भक्ति का था। उन दिनों लोगों ने अपनी भावनाओं के अनुरूप अज्ञात शक्तियों वाले छोटे-मोटे देवताओं की कल्पना कर उनकी धूम मचा दी थी। पर नामदेव ने ऐसे देवताओं की उपासना नहीं की। इतना ही नहीं तो ऐसे देवताओं को मानने वालों की कठोर शब्दों में वे निन्दा करते हैं और भगवान से प्रार्थना भी करते हैं कि ऐसे देवताओं से उन्हें बचावे। वे लोगों को सावधान कर कहते हैं—अरे लोगो, ऐसे देवताओं की उपासना मत करो। ये देवता तुम्हें मोक्ष नहीं दे सकते, ये देवता सिंदूर व प्रसाद की अपेक्षा अपने भक्तों से करते हैं, केवल विट्ठल की ही उपासना करनी चाहिए। वे ही मुक्ति दे सकते हैं।'

नामदेव की भगवान संबंधी कल्पनाओं में कहीं हलकापन नहीं है। शैव व वैष्णवों के आपसी संघर्षों के उन दिनों में नामदेव ने भगवान के विषय में बड़ी ही स्वस्थ उदारता बताई है। उन्होंने कहा है—'शिव की पूजा करोगे तो खुद शिव बन जाओगे, और विष्णु को पूजोगे तो विष्णु बन जाओगे।' मानस शास्त्रियों का भी यही कहना है कि जैसा हम सोचते हैं वैसा ही बन जाते हैं। इस प्रकार नामदेव की रचनाओं में उदारता है साथ-साथ मानस शास्त्र का उनका गहरा अध्ययन भी स्पष्ट दिखाई देता है।

भगवान की प्राप्ति ज्ञानयोग, कर्मयोग व भक्तियोग द्वारा की जा सकती है। अब हम इस बात पर विचार करेंगे कि नामदेव ने किस योग द्वारा भगवान की आराधना की व अन्य योगों के बारे में उनके विचार क्या थे।

5. भक्ति का इंद्रधनुष

ज्ञानदेव योगी थे और हठयोगी भी। पर नामदेव तो भक्त मात्र ही थे। लेकिन उन दोनों की मैत्री फूलों की पंखुरियों के समान मधुर व सुखद थी। अनेक भावुक विद्वानों की मान्यता है कि नामदेव ने ही ज्ञानदेव को भक्ति का महत्व व महात्म्य बताया था और उन्हें भक्ति मार्ग का पथिक बनाया था। कुछ विद्वानों के अनुसार नामदेव ने सगुण भक्ति का प्रसार किया था। इसके विपरीत, यह भी कहा जाता है कि उत्तर भारत में नामदेव ने निर्गुण भक्ति का प्रचार-प्रसार किया था। इन सारे विवादों से यह एक तथ्य तो निर्विवाद है कि नामदेव भक्तिमार्गी थे। यह कथन भी सत्य ही है कि महाराष्ट्र की भक्ति परम्परा का प्रसार सुदूर पंजाब में नामदेव ने किया था।

नामदेव की भक्ति का स्वरूप पारंपरिक ही है। उनके अभंगों में नवधा भक्ति के समस्त प्रकारों के दर्शन होते हैं। भक्ति-पथ में आने वाले समस्त श्रद्धा-स्थानों का गुणगान उन्होंने बड़ी श्रद्धा से किया है। उदाहरणार्थ भक्ति के साधनों में तुलसी को असाधारण महत्व है। भगवान विष्णु या विट्ठल को तुलसी-दल अत्यन्त प्रिय है। इसीलिये नामदेव अपने एक अभंग में तुलसी का महत्व बताते हुए कहते हैं—'तुलसी रहित घर घोर अमंगलकारी है। उस घर में यम के गण रहते हैं।' तुलसी के प्रति उनका प्रेम इन शब्दों में प्रकट हुआ है —'तुलसी वृन्दावन की जो परिक्रमा करते हैं और अंत समय में जो तुलसी का स्मरण करते हैं, वे जन्म-मरण से मुक्त हो जाते हैं।''

मुक्ति के विविध रूपों का गान वे बड़ी तल्लीनता से करते हैं। पर कभी वे भक्ति मार्ग की कठिनाइयों का तो कभी सरलताओं का वर्णन करते हैं। कभी वे अन्य कर्म-धर्म मानने की बात भी कहते हैं। योगाभ्यास का निषेध कर कहीं यह भी बताते हैं कि भगवान की प्राप्ति के लिये केवल धर्मग्रन्थों का पाठ उपयोगी नहीं है। कुछ विद्वानों ने नामदेव के भक्ति मार्ग को 'नामवेद' तक कहा है।

नवधा भक्ति के प्रायः सारे अंगों का वर्णन नामदेव की रचनाओं में है। उनका इस तरह का काव्य बालक्रीड़ा व स्फुट अभंगों में मिलता है। संशयास्पद कविता 'तीर्थावली' में भी भक्ति रस के दर्शन होते हैं। इस पुस्तक में 'तीर्थावली' का उल्लेख इस संदर्भ में नहीं किया गया है। नाद मुग्ध हरिणी जैसे तन्मय होकर स्वयं को भूल जाती है, उसी तन्मयता से नामदेव ने भगवान का गुणगान किया है। वे पूर्ण आत्मसमर्पण की भावना से कहते हैं—भगवान, तुम्हारे श्री चरणों की खोज मैं कभी भी बंद नहीं करुंगा, तुम्हारे श्री चरणों की व अपने मन की कभी न छूटने वाली गांठ मैंने बांध ली है। मैं बार-बार जन्म लूं और हर जन्म में तुम्हारे चरण-कमलों की सेवा करने का सौभाग्य मुझे मिले, बस यही मेरी कामना है।''

नामदेव के काव्य में इसी तरह का मार्मिक समर्पण दिखाई देता है। भगवान की भक्ति में

अशरणता व तन्मयता अत्यावश्यक है, यह ध्यान में रखकर वे उन सब भक्तों का भगवान को स्मरण कराते हैं, जिनका उन्होंने उद्धार किया था। अपनी रचनाओं में उन्होंने स्वयं का चित्रण भगवान के दास रूप में ही किया है। वे कहते हैं—'भगवान, मैं आपका दास हूं, आप मुझे उदास नहीं करें।' परमेश्वर को अपना पिता, माता, भाई, बहिन आदि सब मानकर सखा भाव से भी वे उनकी आराधना करते हैं।

नामदेव के आत्म-निवेदन में वर्णित पीड़ा मराठी के संत काव्य में तो अन्यत्र दुर्लभ ही है। उनके आत्म-निवेदन के कुछ भाव इस प्रकार हैं—त्रितापों से मैं पीड़ित हूं। भगवान का नाम मुंह में आता नहीं। मुक्ति आदि मुझे कुछ भी नहीं चाहिए। मुझे तो बस भगवान ही चाहिए। भगवान के लिए पुनर्जन्म भी मुझे स्वीकार है। प्रपंच सर्वभक्षक अग्नि के समान ही है। काम क्रोध आदि शत्रुओं से मैं बहुत दुखी हो गया हूं। संसार में कोई लाभ नहीं हैं। यह शरीर काल का भोजन ही है।...... 'आत्म-निवेदन की अपनी फुलवारी में इसी तरह के सुन्दर फूल उन्होंने खिलाये हैं। इसी प्रकार भक्ति वर्णन के प्रवाह में आत्म प्राप्ति के बाद विट्ठल का स्मरण ही 'सही विश्रांति, अखंड आत्मोद्धार का विचार ही श्रेष्ठ मनन' आदि कल्पनायें उन्होंने प्रस्तुत की हैं।

नवधा भक्ति के इस आचरण से फिर वह अलौकिक अवस्था प्राप्त होती है जिसके अन्तर्गत सर्वत्र भगवान दिखाई देते हैं। उनके एक अभंग के अनुसार फिर जिधर-देखो उधर सारे नरनारी चतुर्भजधारी भगवान के समान ही दिखाई देते हैं। भगवान का ध्यान ही वास्तविक संध्या है, यह कहते हुए उन्होंने एक अभंग में भगवान से यह मांगा है कि 'मुझे भक्ति का सुख मिले, तुम्हारे द्वार में रहूं। इसके लिए तुम्हारी जूठन की प्राप्ति के लिए श्वान, चारे के बहाने पक्षी और तुम्हारी प्रतिमा के सामने रखी जाने वाली पाषाण-शिला भी बनना पड़े तो मुझे स्वीकार है।' भक्ति मार्ग में जाति भेद रहता ही नहीं। भक्ति की विविध अवस्थाओं का बड़ा ही सफल व समर्थ चित्रण नामदेव ने किया है। 'नाम महात्म्य' उनकी भक्ति का मूल व सार है।

नामदेव ने नाम-महिमा की शक्ति का वर्णन बड़े आत्मविश्वास पूर्वक किया है। विविध अभंगों में उन्होंने बड़ी स्पष्टता से कहा है—'नाम की महिमा ब्रह्मा भी नहीं जान सके, नाम की शक्ति का अन्त वेद भी नहीं पा सके, मुक्ति की प्राप्ति के लिए नाम के सिवा और कोई सरल मार्ग है ही नहीं, नाम, लेते ही यम भी कांपने लगता है, नाम स्मरण करने वालों की चरण वंदना यमराज करता है, राम का नाम लेते ही पाप नष्ट हो जाते हैं, चित्रगुप्त लेखनी रख लेता है, पूजन सामग्री लेकर स्वयं ब्रह्मादेव भगतों की पूजा करने उपस्थित हो जाते हैं, नाम श्रवण करने के लिए देवताओं के समूह भागे आते हैं।'.......

नामदेव कहते हैं—'नाम की विशेषतायें असंख्य हैं। नाम स्मरण कभी भी करने पर पुण्य व फल प्रदान करता है। नाम स्मरण कहीं भी और कभी भी किया जा सकता है- भले ही वह विवाह का समय हो या जीवन का अंतिम समय हो। भवसागर से पार करने वाली नैया नाम ही है। नाम के कारण ही जन्म-मरण के बंधन टूट जाते हैं। साधारण लोगों को तारने के लिए सबसे सरल साधन नाम ही है। यदि कोई गर्भिणी नाम स्मरण करे तो स्वयं विट्ठल ही उसके घर पर जन्म लेते हैं। अक्षय सुख का एकमेव स्थान नाम है। अन्य सारे साधन हलके पड़ते हैं। विशेषकर कलियुग में नाम ही खरा धर्म है। नाम स्मरण करने वाले साधक की उपेक्षा भगवान कभी नहीं करते। नाम ही

साधक की माता है। साधक के मन के सारे विकार नाम स्मरण से नष्ट होते हैं। कीर्तन में किये गये नाम स्मरण से भगवान संतुष्ट होते हैं। नाम व रूप मूल में एक ही है।'

इस प्रकार के अत्यन्त प्रौढ़ विचार नामदेव की अभंग वाणी में मिलते हैं। नाम संकीर्तन का महत्व विविध रीतियों से समझाने का सफल प्रयत्न उन्होंने किया है। इस काम में उन्होंने थोड़ी भी अरुचि नहीं बताई है। नाम स्मरण का संबंध शरीर से रहता ही है। शरीर की प्रशंसा करते समय उन्होंने बड़ी सूझबूझ प्रकट की है। वे कहते हैं—'हरि कथा श्रवण कानों से ही किया जाता है। यह शक्ति केशव ने ही दी है। आंखें हैं, इसलिए उनका रूप हम देख सकते हैं। हाथ है, इसलिए उनकी पूजा-अर्जा हम कर सकते हैं। ये सारे उपकार उन भगवान के ही हैं। पर मनुष्य इन सबको भूल जाता है।' इस अभंग की कल्पनायें बड़ी सारगर्भित है। इसी प्रकार की भावपूर्ण कल्पनायें अन्यत्र भी दिखाई देती हैं गजेन्द्र, पिंगला, सुदामा, ध्रुव, संकटों में घिरे हुए पांडव, विभीषण, हलाहल का पान करने वाले शंकर आदि के दृष्टांत नाम महिमा में अन्यत्र भी हैं। नाम महिमा विभाग के तत्वचिंतन व दृष्टांत विचार को मिलाकर यदि देखा जावें तो भागवत ग्रन्थ का नामदेव पर पड़ा प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

नामदेव के दृष्टांतों का रंग निराला ही है। अनेक संत एक दूसरे से भक्ति का लेन-देन करते हैं। भक्ति का वर्णन करते समय वे प्रेम का प्रसाद बांटते हैं। भक्ति धाम के मार्ग में मीठे अंगूरों से लदी बेलें उन्होंने रोपी है। वहां प्रेम रस से परिपूर्ण पके आम भी हैं। इस प्रकार पंढरपुर की तीर्थयात्रा का आर्कषण उन्होंने बड़ी कुशलता से व्यक्त किया है। एक जगह उन्होंने नाम को सोलह कलाओं से युक्त पूर्णिमा व एक अन्य जगह उसे मुक्ति का पीहर कहा है। नाम को उन्होंने फसल की उपमा भी दी है। नामदेव की भक्ति का अथवा नामदेव का स्वरूप ऐसा है। भक्ति का यह गुणगान प्रत्यक्ष अनुभव पर आधारित होने के कारण सजीव व बड़ा ही सरस है। भगवान का स्मरण करते शरीर का पुलकित व रोमांचित होना, भगवान के श्री चरणों को किया हुआ आलिंगन, भगवान के दर्शन न होने पर निराशा व दुख से मुरझाया हुआ मुख और पीड़ा से भरे हृदय आदि का वर्णन बड़ा ही मनभावन है। नामदेव कृत भक्त व भक्ति का यह वर्णन पढ़ते समय एक महान भक्त के रुप में नामदेव की प्रतिमा सामने उपस्थित हो जाती है। इस प्रतिमा के सौन्दर्य में उलझने के बाद अन्य बातों की ओर वाचक का ध्यान जाता ही नहीं।

नामदेव का स्वतः का कोई कड़ा तत्वज्ञान नहीं है, इस विचार का कोई विशेष आश्रय नहीं है। यही कहा जा सकता है कि आत्मानन्द में मगन रहने वाले वे एक साधु पुरुष थे और ज्ञानेश्वर के समान ही भक्ति विद्या का भरपूर प्रसार करने के लिए ही उन्होंने अवतार लिया था। आत्म-सुख में लीन उन्होंने अन्य लोगों से दुराव नहीं किया। बल्कि उनका उद्धार करने व उनमें विवेक को जाग्रत करने के लिए मानवता की दृष्टि से उन्हें उपदेश दिया। यह भी कहना होगा कि नामदेव द्वारा लोगों को किये गये उपदेश का महत्व भी उनके नाम महात्म्य के समान ही है।

6. उपदेश

संत मंडल में से ही एक नामदेव थे। उनके उपदेशों के स्वरूप के बारे में जिज्ञासा होना स्वाभाविक है। वैसे देखा जाये तो सारे संत मूलतः समान ही रहते हैं। रामदास ने तो स्पष्ट ही कहा है कि 'साधु ऊपर से भले ही अलग दिखाई देते हैं पर उनका आतंरिक स्वरूप समान ही रहता है। समस्त साधुओं के उपदेशों को यदि एकत्रित किया जाये तो उनमें पुनरुक्ति के सिवा कोई विशेष नई बात नहीं मिलेगी। हां, रामदास जैसे विरले संत ही कुछ अलग बात कहेंगे। ईट का जबाब पत्थर से देने का उपदेश रामदास देते हैं। आनन्द से भरपूर ये उद्‌गार भी वे प्रकट करते हैं कि 'पापी औरंग्या (औरंगजेब) व उसका म्लेच्छ राज्य नष्ट हो गया।' रामदास के ये वचन अन्य संतों से अलग ही हैं। फिर भी अन्य साधु-संतों के समान ही रामदास के उपदेश हैं।

विभिन्न समयों में होने वाले साधु-संतों के उपदेशों का स्वरूप समान ही रहता है। ऐसा क्यों होता है ? उत्तर यही है कि मानव की उन्नति व अवनति का रूप समान ही होता है। मोह की मात्रा मानव में अधिक रहती है इसलिए अधःपतन की ओर उसकी चाल जरा तेज ही रहती है। एक पीढ़ी को दिया गया उपदेश दूसरी पीढ़ी को उपयोगी सिद्ध नहीं होता। उपदेश भले ही वही क्यों न हो, उसे बार-बार कहना पड़ता है। इसके लिए कभी-कभी ऐतिहासिक कारण भी होते हैं। उदाहरणार्थ मराठी संतों द्वारा कहे गये उपदेश नये नहीं हैं। भागवत आदि धर्म ग्रंथों में भी वे ही उपदेश हैं। पर भागवत की भाषा अलग है। भाषा बदलने से जन-सामान्य तक उपदेश पहुंचने में असुविधा होती है। इसीलिए लोगों की भाषा में वही पुराना उपदेश पुनः देना आवश्यक हो जाता है।

कई बार ऐसा भी होता है कि ऐसे संतों के पहिले उस समाज में कई विकृतियां घर कर लेती हैं और अधर्म धर्म के स्थान पर अधिकार जमा लेता है। ऐसे समय में उस अधार्मिक समाज का वास्तविक रूप संसार को बताना होता है और अधर्म के साथ ही खरे धर्म का विचार, धर्म के साधन और संतों के अज्ञात लक्षण स्पष्ट रूप से समझाने पड़ते हैं। इस प्रकार विष-वृक्षों को काटने का व कल्पवृक्षों को बोने का कार्य साथ-साथ किया जाता है। नये सुविचारों की लताओं को कल्पवृक्षों के सहारे छोड़ दिया जाता है। अधार्मिक आचरण की कालिमा से भरी गुफा में छिपे नीति के शुद्ध, स्वस्थ तत्वों को प्रकाश में लाकर उनसे सबको परिचित कराना होता है। यह कार्य संतों का है।

नामदेव उच्चकोटि के संत थे, फिर भी उन्होंने उक्त कार्य करने वाले संतों का उल्लेख बड़े गौरव के साथ, कई बार और कई पद्धतियों से किया है। अपने अभंगों में वे कहते हैं —'भगवान की आत्मा ये संत ही हैं। ऐसे संतों के चरणों में सदा रहना चाहिए।' इतना ही नहीं तो उनकी यह कामना थी कि उनकी समाधि पर संतों के चरण पड़ें। (पंढरपुर में स्थित 'नामदेव की पैड़ी' के रूप में उनकी यह कामना पूर्ण भी हुई है।)

वे मानते हैं और अपने अभंगों में कहते हैं कि 'दीन जनों के उद्धार हेतु स्वयं भगवान ने संतों के रूप में पृथ्वी पर जन्म लिया है, वह देश धन्य है, जहां संतों का निवास है, संतों के द्वारपाल बनकर अपना आत्म कल्याण करना चाहिए, संतों के लिए स्वर्ग व मिट्टी समान है, वृक्षों के समान संत भी मान-अपमान नहीं मानते, वे स्वयं के लिए पूर्ण उदासीन पर तुच्छ लोगों के लिए उनके मन में प्रेम का सागर लहराता है, संतों के घर काम-धन्धा करने के लिए स्वयं भगवान उत्सुक रहते हैं, भगवान अपना प्राण संतों को ही मानते है।' इस प्रकार के अनके श्रेष्ठ विचार उनकी गाथा में है।

संतों के बारे में ये विचार उनके श्रद्धालु मन का परिचय देते हैं। उनकी संत भक्ति का भरपूर दर्शन उनके एक अभंग में है जिसका भावार्थ है:

> 'आषाढ़ और कार्तिक की एकादशी मेरे जीवन के सबसे सुखदायी दिन है। पंढरपुर में तब भगवान पांडुरंग की सब सुख देने वाली शोभा देखकर मेरा जीवन सार्थक हो जाता है। वहां संतों के दर्शन-आलिंगन-मिलन से अपार सुख मिलता है और सारे दुख समाप्त हो जाते हैं।...'

संतों के बारे में नामदेव के ऐसे श्रेष्ठ विचार थे। यह स्वीकार करना होगा कि स्वतः नामदेव भी इसी कोटि के संत थे। नामदेव के समय में संतों की फसल पूरे सोलह आने हुई थी। तब सामान्य जनता संस्कृति में वर्णित धर्म को समझती नहीं थी। वास्तव में धर्म को समझाने का कार्य ब्राह्मणों का है परन्तु पतित समाज में ब्राह्मण भी पतित हो जाते हैं। तब ब्राह्मण व क्षत्रिय पतित हो गये थे। धर्म की तात्विक रक्षा व विकास करने का कार्य ब्राह्मणों का और विधर्मियों के आक्रमणों व कुचक्रों से समाज की रक्षा करने का कार्य क्षत्रियों का है। पर तब इन दोनों समाजों की भारी अधोगति हो गई थी। (नामदेव के अभंगों में क्षत्रियों से ब्राह्मणों का पतन अधिक बताया गया है) ये दोनों समाज जातीय अभिमान में चूर थे। उनकी कर्मठता समाप्त हो गई थी। ब्राह्मणों को उनके कर्त्तव्यों का भान ही नहीं था। समाज पतित हो गया था। कुछ सन्यासी भी मोहाधीन हो गये थे। ऐसे समाज को उपदेश देते समय शुभ व अशुभ का भेद बताना ही होता है। नामदेव के अभंगों में ऐसे अधार्मिक प्रतिष्ठित लोगों का सुन्दर चित्रण है। स्त्री के कारण लोग अपने माता-पिता का अपमान करते हैं। पर स्त्री के मोह में पड़कर बर्बाद होते हैं। संतों का रूप धारण करने वाले ढोंगी लोग समाज में मान्यता पाते हैं। नामदेव कहते है कि इन सारी बुरी बातों का कारण कलियुग है।

नामदेव कहते है — 'वे पाखंडी लोग तिलक लगा, माला पहन स्वयं को त्यागी व विरक्त बताते हैं पर वास्तव में वे धन व स्वार्थों की भक्ति करते हैं। उनके हृदय में विषय वासना का तूफान मचा रहता है। कई लोग हरि कथन कहते हैं पर वे उसे अपना पेट भरने का धन्धा बना लेते हैं। कई मक्कार लोग देवताओं के नाम पर अशोभनीय कार्य कर पैसा बनाते हैं। गुरु का अपमान करते हैं। तिलक माला धारण कर साधु का स्वांग भरकर भोले-भाले लोगों को ठगते हैं। वेदों द्वारा बताये गये धर्म को बताने के बदले वे अनाचार का प्रसार करते हैं। एक पाई का स्वार्थ भी वे त्याग नहीं सकते। साधु कहलाने वाले पैसे के लिए एक-दूसरे का गला घोंटते हैं। स्वयं को साधु कहने वाले कुछ भोंदू लोग भूतप्रेतों को भगवान बताकर अज्ञानी लोगों को धोखा देते हैं। केवल प्रतिमाओं की पूजा करने वालों से नामदेव ने सीधा प्रश्न पूछा है कि धातु की ये प्रतिमायें क्या अकाल के समय काम आवेंगी?

अज्ञानी लोगों को ज्ञानी बनाने के लिए नामदेव ने सबसे पहले ज्ञान मार्ग में आने वाले संकटों की स्पष्ट जानकारी दी है। संतों के उपदेश का-यह स्वरूप सामाजिक जीवन के संदर्भ में बहुत उपयोगी है। यह कहा जा सकता है कि समकालीन जीवन का यह बड़ा ही अशोभनीय अध्यात्म चित्र है। नामदेव के उपदेशामृत का यह एक भाग है। यह चित्र नकारात्मक या अभावात्मक है। सामान्य आदमी की आध्यात्मिक भूख शांत करने के लिए नामदेव के काव्य में भरपूर सामग्री है। जन्म-मरण की स्थायी चिन्ता मनुष्य पर छायी रहती है। इसलिए अत्यन्त व्याकुल होकर नामदेव ने कहा है कि मुक्ति का एकमेव साधन 'रामकृष्ण नारायण' हैं, उनकी भक्ति से ही सांसारिक बंधन टूटेंगे और जन्म-मरण का चक्कर भी समाप्त होगा।

नामदेव कहते है — 'वेद शास्त्रों का यही संदेश है कि भव बंधनों को तोड़ने के लिए वासनाओं का और शरीर व धन वैभव के अभियान का त्याग तथा सदैव गोविन्द का स्मरण करना आवश्यक है। मनुष्य को मोह के जाल में फांसने वाले शत्रुओं की कमी नहीं है। ये शत्रु मनुष्य को सन्मार्ग पर से हटा देते हैं और कुविचार, दुराचार आदि के अधीन मनुष्य हो जाता है।' पर नामदेव इस बात का विशवास दिलाते हैं कि मनुष्य पापों के दलदल में इस सीमा तक भी यदि फंस गया तो भी घबराने जैसी बात नहीं है। वह यदि सच्चे अंतःकरण से नाम साधना करेगा तो वह दलदल से अवश्य निकल आवेगा और सारे पापों पर भी विजय प्राप्त कर लेगा।

अपने परिवार के बारे में नामदेव की चेतावनी ध्यान देने योग्य है। वे बहुत साफ-साफ कहते हैं — 'अपने सारे सगे सम्बन्धियों को पूरे ध्यान से देखो व पहचानो। अपने पुत्र-भाई-बन्धु को तुम मेरा-मेरा कहते हो पर अंत समय में कोई साथ नही देता।' वे कहते हैं — यह मनुष्य जन्म केवल एक रात्रि का ही मुकाम है — जैसे कोई बटोही अपनी यात्रा में रात को किसी स्थान पर मुकाम कर सवेरे ही आगे बढ़ जाता है। ब्रह्म सुख प्राप्त करने की पहली शर्त यह है कि मनुष्य देह से आसक्ति समाप्त हो जानी चाहिए।'

इस प्रकार की अन्य रचनाओं पर से नामदेव के मन की अद्वैत की भूमिका बहुत स्पष्ट हो जाती है। सामान्य आदमी के लिए ज्ञान मार्ग उतना सरल नहीं है। भक्ति की परम्परा का माहात्मय बताते हुए नामदेव ने एक अभंग में बड़ा ही सरल सहज सुलभ साधन मार्ग बताया है। उस प्रसिद्ध अभंग के भाव इस प्रकार हैः

> 'एक एकादशी करने से क्या होता है? उपवास करने, तुलसी दल चढ़ाने, जागरण करने और हरि-हरि बोलने से क्या मिलता है? इसी प्रकार संत समागम से, चरण रज लेने, दंडवत करने, प्रदक्षिणा करने और तीर्थयात्रा करने से भी क्या होता है और क्या मिलता है? नामदेव कहते हैं कि कामना रहित भक्ति क्यों नहीं करते। ऐसी भक्ति का आनन्द ही अलग है। ऐसी भक्ति ही करना चाहिए।

किसी भी सामान्य आदमी की समझ में अत्यंत सरलता से आ जाने वाला नामदेव का यह भक्ति शास्त्र है। नामदेव के समय में भगवान की आराधना के अनेक जटिल व कठिन मार्गों की तुलना में नामदेव का यह भक्ति का मार्ग कितना अधिक सरल है। नामदेव ने अपने एक अभंग में कहा था — 'हाथ उठाकर वेद कहते है कि भक्ति के बिना मुक्ति संभव नहीं है।' नामदेव के ये वचन सामान्य लोगों को दिया गया एक बड़ा आध्यात्मिक आश्वासन है। भक्ति के बिना जीना व्यर्थ व

लज्जाजनक है — यह आव्हान जब नामदेव ने अपने कीर्तन व प्रवचनों में किया होगा, तब साधारण लोगों के मन में कितना विश्वास पैदा हो गया होगा ?

नामदेव का जीवन में उनका कर्तव्य भक्ति मार्ग के इस प्रचार से पूर्ण रूप से जुड़ा हुआ है। इसीलिए वे कहते हैं— 'भक्ति भावना से जो आदमी भगवान के पीछे चलता है, उसे भगवान वापस लौटाते नहीं। भाव के अनुसार ही भगवान मिलते हैं। आलस्य त्याग कर नाम स्मरण करने वाले पर भगवान बहुत प्रसन्न होकर स्नेह करते हैं। भगवान के चरण-कमल कसकर पकड़ लेना चाहिए। ऐसा लगता है मानो ये सारी बातें नामदेव ने अपने स्वयं के अनुभव के आधार पर ही लिखी हैं। अत्यंत साधारण शब्दों में भक्ति से प्राप्त सुख का जैसा अच्छा वर्णन नामदेव करते हैं, उसका खरा आनंद उनका पूरा अभंग पढ़ने से ही आ सकता है। वह पढ़ने पर सहज ही सब समझ में आ जाता है। किसी के समझाने की जरा भी आवश्यकता नहीं पड़ती। परमेश्वर से साक्षात्कार कर लेने वाले पूर्ण अनुभवी उच्च कोटि के संत के सिवा इतनी श्रेष्ठ अनुभूति का अभंग रचा जाना संभव ही नहीं है। उक्त भाव पूर्ण अभंग की प्रथम पंक्तियां है— **जें जें पुण्य जोड़े हरिनाम गजरीं। त्याचे बाटेकरी दोघे जण।।**

इस अभंग का भावार्थ यह है :

> 'हरि नाम का कीर्तन करने से दो लोगों को पुण्य मिलता है— एक तो सावधान [illegible] दूसरा प्रेममय कीर्तनकार। अनुभवी संतजन यह अच्छी तरह से जानते हैं [illegible] की भक्ति करने से नित नया सुख प्राप्त होता है। कीर्तन के समय उन्हें [illegible] कोई भी दीखता नहीं। उन भक्तों को भगवान अपने पास ही खड़े लगते हैं। [illegible] के कारण भगवान अपने भक्त को हृदय से लगाकर अभयदान देते हैं। फिर भक्तगण धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष और मुक्ति को भी त्यागकर विश्रांति के लिए केवल भगवान की शरण में आते हैं। वे कीर्तन करते हुए भगवान के दर्शन की आस लगाए उनके दर्शनों की राह देखते हैं। नामदेव कहते हैं कि वे लोग धन्य हैं जो पंढरपुर की यात्रा करना नहीं भूलते।'

यह रचना तीर्थयात्रा व विट्ठल की मूर्ति के बारे में है, फिर भी उसमें भक्ति मार्ग का महत्व व प्रभावपूर्ण आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुत किया गया है। सामान्य सांसारिक आदमी संसार से पलायन नहीं करें, घबरावे नहीं और भगवान विट्ठल के चरणों से भक्ति करें, ये बातें उन्होंने बार-बार दुहराई हैं। सांसारिक लोगों को कभी-कभी अपनी जाति व वर्ण आदि का अहंकार हो जाता है। वास्तव में यह अहंकार व्यर्थ है। नामदेव कहते हैं— 'जाति के आधार पर भगवान नहीं मिलते। जाति का अभिमान करना व्यर्थ है। यदि ऐसा होता तो साधु निरभिमानी क्यों होते हैं ?'

नामदेव के उपदेश केवल सामान्य लोगों के लिए ही नहीं है। विभिन्न प्रकार के लोगों के जीवन में भक्ति विविध कार्य करती है। ध्रुव, रावण, उग्रसेन, गजेन्द्र, विदुर, कुब्जा, सुदामा और गोपियों को ही लें तो इनकी सामाजिक स्थिति एक समान नहीं थी। कोई सम्राट था तो कोई भिखारी। कोई दासी थी तो कोई विवाहित महिला थी। कोई सम्पन्न कुल से जन्मा था तो कोई अनाथ। कोई बालक था तो कोई पशु योनि में जन्मा था। इस प्रकार विविध जातियों व योनियों में जन्में सारे जीवों का उद्धार केवल भक्ति मार्ग से कैसे हुआ, इसका बड़ा ही मनभावन व रोचक वर्णन नामदेव ने किया है। वे कहते हैं— जहां भक्ति है, वहां और किसी भी बात की आवश्यकता है ही नहीं।

उन्होंने अंत में यह निष्कर्ष प्रकट किया है कि भगवान को केवल निर्मल भक्ति ही चाहिए व भक्ति से भगवान कृपा करते ही हैं। विभिन्न स्थितियों के लोगों को भक्ति मार्ग सुलभ कर देने का महत् कार्य नामदेव ने किया, पर इसके साथ ही साधनारत लोगों को अध्यात्म प्राप्ति की महत्वपूर्ण जानकारियां भी दी हैं। मुमुक्षों को उन्होंने समझाया है—'अविद्या को अपने जीवन में स्थान ही मत दो। यदि अविद्या को दूर रखा तो नरनारायण तुम्हारे पास ही तुम्हें दिखाई देंगे। इस जागती का पसारा मृगतृष्णा की एक अनंत मृगजल खाई के समान है। उस खाई का पानी चाहे जितना बाहर फेंको, वह खाली होती ही नहीं। उसके तल का न तो पता चलेगा और न वह दिखेगा वह दुखदाई मृग-जल दिखाई ही नहीं दे, इसलिए यही आवश्यक है कि मुमुक्ष को भजन में लीन हो जाना चाहिये। इसी से वह तर जावेगा। विट्ठल के चरण ही सर्वश्रेष्ठ तीर्थ हैं।''

एक अन्य अभंग में उन्होंने कहा है— भगवान की प्राप्ति के लिये वन में रहना आवश्यक नहीं है। जिसका चिंतन किया जाता है उसी का रूप भक्त को प्राप्त हो जाता है। भक्ति के बिना विद्वत्ता व्यर्थ है। उस विद्वता का कोई उपयोग ही नहीं है। मुमुक्ष को चाहिए कि भगवान को जानने के लिये साधना करें। साक्षात्कार के ब्रह्मानंद का अनुभव किसी को बताया ही नहीं जा सकता। जो अनुभव करता है, वही जानता है। जैसे मीठे फल का आनंद गूंगा जानता तो है, पर उसका वर्णन नहीं कर सकता।

यह कहा जा सकता है कि सामान्य लोगों, मुमुक्षों व भटके हुए भोले लोगों के लिए नामदेव ने मानों एक ज्ञान केन्द्र ही स्थापित कर दिया है। अभावात्मक व भावात्मक स्वरूपों की बार-बार जानकारी देकर अर्द्धपतन के मार्ग पर नहीं जाने की सलाह उन्होंने मनुष्यों को दी है। उन्होंने विट्ठल की भक्ति को ही सर्वश्रेष्ठ माना है और यहां तक कह दिया है कि यदि मेरा सिर भी अलग कर दिया गया तो भी अन्य किसी देवता का नाम नहीं लूंगा। पर इतना कह देने के बाद भी वे यही आश्वासन भरा उपदेश देते हैं कि 'भगवान के किसी भी रूप का भजन-चिंतन करो। भवसागर के बंधन तोड़ने के बाद सारी चिंताएं समाप्त हो जाती हैं।'

ऐसा है नामदेव के उपदेशों का स्वरूप। प्रारंभ में ही यह बताया गया है कि संत न तो उपनिषदों का रचयिता होता है और न आध्यात्म विद्या में कुछ नया जोड़ने वाला विद्वान। फिर नामदेव की तो बात ही अलग थी। उन्होंने ऐसी जाति में जन्म लिया था जहां सहजता से विद्या व ज्ञान प्राप्त करना तब सम्भव ही नहीं था। सरल भक्ति के गीत गाते हुए सदाचरण, सद्विचार, ईश्वर प्राप्ति, संसार से अलिप्तता आदि श्रेष्ठ बातों की शिक्षा उन्होंने सर्व साधारण लोगों को दी। अपनी मराठी रचनाओं पर वे प्रमुख रूप से सगुण भक्ति के प्रचारक ही लगते हैं। उनकी हिन्दी रचनाओं में भक्ति के स्वरूप का संक्षिप्त विवरण आगामी पृष्ठों में किया गया है।

नामदेव द्वारा उनकी रचनाओं में प्रकट किये गये विचारों का अध्ययन मनन मराठी के कुछ विचारकों ने किया है। उनका कहना है कि नामदेव ने भाग्यवाद को महत्व दिया है। इसका आधार वे नामदेव के इन विचारों को मानते हैं— 'शरीर संचित कर्मों के अधीन है, कर्म रेखा से देवता भी बच नहीं सकते, भाग्य किसी का टलता नहीं, पिछले जन्म के भोग इस जन्म में भोगना ही पड़ते हैं' आदि।' उनके इन वचनों से यह सिद्ध होता है कि वे भाग्यवाद को जीवन का अपरिहार्य अंग मानते थे।

डा॰ हे.वि. इनामदार ने अपने ग्रंथ 'संत नामदेव' में लिखा है कि 'हमें यह स्वीकार करना होगा कि जिन परिस्थितियों में नामदेव ने भाग्यवाद को स्थापित किया था, उन परिस्थितियों में लोगों की दुर्बलता का पोषण करने के बदले उन्हें शांति व संतोष देने का कार्य उनके इन विचारों ने किया था। भाग्यवाद के समान ही ज्ञानदेव के आत्म सत्तावाद व शंकराचार्य के जगन्मिथ्यावाद इन दोनों मतों की प्रतिध्वनि नामदेव के काव्य में स्पष्ट है।'

अपने इन विचारों की पुष्टि के लिए उन्होंने कहा है— 'चारों ओर फैला हुआ यह संसार आडम्बर मात्र है, मायामय है और सपना मात्र है। शरीर तुच्छ व साधारण वस्तु है और वह काल का भोजन है। ...सारा विश्व भगवान का शरीर है। ...विभिन्न फूलों की सुगंध अलग-अलग होती है, वैसे ही भगवान का निवास सारे जीवों में है। ...बीज में ही वट वृक्ष का विस्तार रहता है। इस जगत की सारी वस्तुओं व जीवों में भगवान समाये हैं। सब में भीतर व बाहर उस भगवान का निवास है। ...इस प्रकार के अनेक उद्गारों से नामदेव के तत्वचिंतन का चित्र सामने आ जाता है।

नामदेव ने उपदेश का यह वृत्त अपने जीवन भर चलाया होगा। असाधु लोगों के जीवन में राग द्वेष का जहरीला प्रभाव रहता ही है। खोटे व ढोंगी संतों के पाखंड को प्रकट करने वाले नामदेव के प्रति उन लोगों ने चिढ़कर झूठी अफवाहें अवश्य फैलाई ही होंगी। आत्म विद्या का प्रचार उन दिनों बहुत ही कठिन कार्य रहा होगा। इसीलिये सभी संतों के जीवन में हर कदम पर संघर्ष मिलता ही है। नामदेव ने अध्यात्म का अन्तरंग रहस्य बहुत अच्छी तरह से सुलझाने का कार्य बड़ी सरलता से किया था पर उन्हें प्रशंसा के बदले निंदा ही अधिक सहनी पड़ी होगी और दुर्वचनों की मार भी झेलनी ही पड़ी होगी। तुकाराम के प्रसिद्ध कथन 'बोले तैसा चाले' याने जैसी कथनी वैसी करनी के अनुसार नामदेव के जीवन-काल को सात सौ वर्ष बीत जाने के बाद भी आज लोग नामदेव के चरणों की वंदना करते हैं। पर आश्चर्य इस बात का है कि तत्कालीन विचित्र आध्यात्मिक स्थिति के विरुद्ध छिड़ी लड़ाई का सामना तब नामदेव ने कैसे किया होगा?

आदर्श संत के सम्बन्ध में नामदेव की धारणा क्या रही होगी, यह उनके एक अभंग से स्पष्ट है। उस अभंग का भाव इस प्रकार है।[1]

> 'निंदक भले ही चाहे जितनी निन्दा करें, सज्जनों को अपने मन में क्रोध या विकार पैदा नहीं होने देना चाहिए। निन्दा व स्तुति को समान मानने वाला समाधि की स्थिति को प्राप्त कर लेता है। शत्रु व मित्र को समान मानने वाला भगवान का प्रिय होता है। मिट्टी व स्वर्ण में कोई भेद नहीं मानने वाला ही सच्चे अर्थों में योगिराज है। नामदेव कहते हैं— ऐसे भक्त से ही तीनों लोक पवित्र होते हैं।

इस अभंग पर ज्ञानदेव की कुछ ओवियों की छाया हो सकती है। लेकिन यह निर्विवाद है कि किसी भी कार्यरत ध्येयवादी मनुष्य के मन का यही सनातन चित्र है। इसी में नामदेव के मन की अधीरता, क्रोध, शांति व प्रसन्नता बहुत ही अच्छी तरह से अभिव्यक्त हुई है। अपने विचारों को अंकित करने में सफलता व समर्थक प्रतिभा निर्मित नामदेव के काव्य का भूल है, इसमें कोई शंका नहीं। इसीलिये 'कवि नामदेव' भी सन्त नामदेव' के समान ही अध्ययन का विषय हैं।

निंदील हे जन सुखें निंदु द्यावे।
सज्जनी स्वाभावे क्षोभू नये।।

7. काव्य सौंदर्य

नामदेव सच्चे अर्थों में संत थे। जगत का उद्धार करना उनका व्रत था। सब संतों का जीवनोद्देश्य यही होता है। महाराष्ट्र में कई श्रेष्ठ संत व कवि नामदेव के समकालीन थे। अध्यात्म विद्या का भरपूर प्रसार उनका लक्ष्य था। कई संतों की भूमिका अध्यात्म विद्या के प्रचारक की थी। सदाचार, इंद्रिय निग्रह, अपरिग्रह आदि साधुओं के लक्षण उनमें रहते हैं। अपने उपदेशों के अनुरूप उनका आचरण भी रहता है, इसीलिए उनकी वाणी को एक विशेष प्रकार की तेजस्विता व सिद्धि प्राप्त हो जाती है। ये सन्त अधिकतर प्रकट चिंतन्र करते हैं। इसका मत यह है कि उनकी रचनाओं में किया गया उपदेश पहले उनके अनुभवों के रूप में व्यक्त होता है। अनुभूति के कारण उस काव्य में भावनाओं का तेजस्वी प्रवाह रहता है। नामदेव की कविताओं में स्वानुभव का ऐसा ही सघन स्पर्श व प्रवाह है। उनके अभंगों में भक्ति भावना बहुत अधिक प्रकट हुई है। गाथा की रचनायें अनेक नामदेवों द्वारा रचित हैं, यह बात सतत सामने आती है। पर ये अनेक नामदेव एक-दूसरे में कुछ ऐसे घुल-मिल गये हैं कि संत नामदेव की भक्ति रस की रचनाओं के विभिन्न स्वरूपों को पहचानना कठिन ही है।

एक अभंग में उन्होंने विषयासक्त मन को भगवान पंढरीनाथ के चरणों में लगाने के प्रयत्नों की पराकाष्ठा कर दी है। यह अभंग बड़ा ही भावपूर्ण है। वे कहते हैं— 'उमर बीत गई, जीवन का अंत पास आ गया, फिर भी मन में उठने वाली सांसारिक तरंगें समाप्त नहीं होतीं। इसलिए हे भगवान, संकटों और जन्म-मरण से मुक्ति दिलाओ।' बहुत व्याकुल होकर उन्होंने भगवान से ही ये प्रश्न पूछे हैं कि 'आपने मुझे ऐसा जन्म क्यों दिया और फिर उसमें इतनी वासनाओं का निर्माण क्यों कर दिया? आपने जन्म-मरण व गर्भावास के इस भंवर में मुझे क्यों डाल दिया?' इस व्याकुलता के दर्शन उनके कई-कई अभंगों में होते हैं। कहीं ये कहते हैं— ' ये संत मेरी मां है। वे अमृत जैसा दूध पिलाने वाली गाय है।' कभी वे कहते हैं— 'पता, नहीं, भगवान के दर्शन कब होंगे? उनकी राह तकते मेरी आंखें थक गई।' वे पूछते हैं— 'क्या यह कभी सम्भव है कि पक्षी व हिरणी अपने बच्चों को भूल जाए।' फिर अपने बड़े आर्त हृदय से प्रार्थना करते हैं। 'हे भगवान, दया करो, शीघ्र दर्शन दो और अपने प्रेम का गोरस पिलाकर मेरा जन्म सार्थक करो।' भगवान के दर्शनों की व्याकुलता से परिपूर्ण उनकी प्रार्थना बड़ी ही हृदयस्पर्शी है। यह अधीरता नामदेव ने शब्दों में बहुत अच्छी तरह से व्यक्त की है। लेकिन उसके काव्य सौंदर्य का वर्णन तो कठिन है।

उनके एक अन्य प्रसिद्ध, मधुर व भावपूर्ण अभंग[1] का भाव इस प्रकार हैं:

---

1. भटलागीं जीवा लीगली से आस।

'हे प्रभो, तुम्हारे दर्शन की मुझे बड़ी आशा लगी है। रात-दिन मैं आपकी राह देखता रहता हूं। चकोर का जीवन जैसे पूर्णिमा का चन्द्रमा है, वैसे ही मेरा मन आपके दर्शनों के लिए अधीर रहता है। दीवाली के दिनों में बेटी जैसे अपने माता-पिता के पास जाने के लिए अधीर रहती है वैसी ही मेरी स्थिति है। नामदेव कहते हैं— भगवान, मैं तुम्हारा बालक हूं और आपसे मिलने के लिए तड़प रहा हूं।'

भक्ति मार्ग में भगवान के दर्शन के लिए अधीरता से राह देखना एक अनिवार्य बात मानी जाती है। इस अभंग में भगवान के दर्शनों के लिए व्यक्त व्याकुलता हृदयस्पर्शी है। विशेषकर दीवाली के दिनों में नव विवाहिता कन्या द्वारा मां के निमंत्रण की राह देखने की बात तो इतनी उत्कृष्ट व सटीक है कि उसके बारे में कहना, उसकी मधुरता को कम करने जैसी बात होगी।[1]

नामदेव की भक्ति के विविध अंग हैं और इन अंगों के अनुरूप ही उनके काव्य की शैलियां हैं। संतों के द्वार पर द्वारपाल बनकर रहने की विनम्रता व्यक्त करने वाले नामदेव पूर्ण भक्त बन जाने के बाद अपने अनुभवों का वर्णन बड़े आत्मविश्वास और निश्चयात्मक रीति से करते हैं। वे कहते हैं— 'भगवान का रहस्य मैंने प्राप्त कर लिया है। अब भागवत धर्म को मैं कभी नहीं छोड़ूंगा। भक्ति के भूखे भगवान बैकुंठ छोड़कर पृथ्वी पर आते हैं। इस रहस्य का ज्ञान हो जाने से संतों के चरणों की कृपा से मैं भगवान को प्राप्त कर लूंगा। उनके चरणों पर मेरा मस्तक सदैव नत है।'

भगवत् भक्ति व आत्मविश्वास का परमोत्कर्ष उनके इस अभंग से मिलता है—'बोलूं ऐसे बोल। जेणे विट्ठल डोलो बोले।।' अर्थात प्रेम व भक्ति से परिपूर्ण ऐसी वाणी मैं बोलूंगा जिसे सुनकर स्वयं भगवान झूमने लग जावेंगे। नामदेव का यह अभंग इतना अच्छा है कि उसे विश्व साहित्य में स्थान दिया जाना चाहिए।

इसके सिवा नामदेव ने बड़े साहस व आत्म विश्वास के साथ अपने ये मनोभाव व्यक्त किये हैं कि भक्ति की शक्ति से मैं बड़े ही श्रेष्ठ धाम में पहुंच जाऊंगा और फिर वहां सदा स्थायी रूप से रहूंगा। इस प्रकार आत्म विश्वास से परिपूर्ण भक्ति कभी-कभी चमत्कारिक हो जाती है। भक्ति से परमेश्वर को वश में कर लेने के बाद स्वर्ग व अन्य सुखों को भला कौन पूछेगा ? इसीलिए पंढरपुर में भगवान विट्ठल के दर्शनों से मिलने वाले आनंद का वर्णन करते समय वे बहुत स्पष्ट कहते हैं— 'पंढरपुर में विट्ठल के दर्शन के सामने स्वर्ग के सारे सुख तुच्छ लगते हैं और बैकुण्ठ या कैलाश में रहने की इच्छा नहीं होती। केवल विट्ठल के ध्यान के सामने सम्पत्ति-संतति या मान-सम्मान का कोई महत्व नहीं है।'

उनका उपरोक्त कथन सही है या गलत, इसका भार भी वे भगवान पर ही छोड़ देते हैं। भक्ति को नये स्वरूप में प्रस्तुत करने में उन्हें अवश्य आत्म संतोष प्राप्त हुआ होगा। पर केवल आत्म संतोष तक ही सीमित रहने वाले व्यक्ति नामदेव नही थे। उनके हृदय में सामान्य लोगों के प्रति भी अपार प्रेम था। करुणा भी थी इसीलिए उन्होंने कहा था— 'नाचूं कीर्तनाचे रंगी, ज्ञानदीप लावू जगीं।' अर्थात् कीर्तन के रंग में मैं नाचूंगा और संसार में ज्ञान का दीपक प्रज्वलित करूंगा। इस कार्य को उन्होंने अपने जीवन का महत्वपूर्ण अंग माना था। इस प्रसिद्ध अभंग में एक बड़े ही महत्व के शब्द

---

1. नव विवाहित कन्या को महाराष्ट्र में पहली दीवाली पर पीहर में उसके पति सहित आमंत्रित किया जाता है।

का उपयोग उन्होंने किया है वह शब्द है— ज्ञानदीप। भक्ति दीप के बदले वे ज्ञान दीप को प्रज्वलित करने की बात कहते हैं। नामदेव केवल एक भक्त ही हैं, यह कहने वालों को चाहिए कि इस 'ज्ञानदीप' शब्द पर गंभीरता से विचार करें।

भक्ति मार्ग के विविध अंगों की श्रेष्ठता को नामदेव ने अपूर्व कुशलता से काव्य में प्रकट किया है। उनका काव्य कौशल प्रथम श्रेणी का है। उनकी भावनाएं उनके काव्य में बहुत अच्छी तरह से प्रकट हुई है। नाम स्मरण करने से अपनी भूख-प्यास समाप्त होकर अपूर्व शांति कैसे उन्हें प्राप्त हो गई, यह एक अभंग में उन्होंने कहा है। एक अन्य अभंग में भगवान को आमंत्रण व उनसे मिलने की अधीरता का वर्णन उन्होंने किया है। इसी प्रकार त्रितापों से पीड़ित मन की वेदना व आराध्य देव के स्वरूप को प्रकट करने वाले अभंगों की रचनायें उन्होंने की हैं। इन सारे अभंगों में भावनाओं व काव्य का सौंदर्य सहज ही बिखरा हुआ है, भक्ति की विविध अवस्थाओं का बड़ा सफल वर्णन उन्होंने एक अभंग में किया है।

भक्ति के सगुण रूप का वर्णन नामदेव ने सजीव व चित्र लिखित सा किया है। एक प्रसिद्ध गोलणी में पहले उन्होंने कृष्ण की बाल-लीलाओं का सरल वर्णन किया है और अन्त में उन्होंने बड़ी विह्वलता से यह कामना की है कि भगवान की चरण सेवा करने का सौभाग्य उन्हें मिले। एक अभंग में बाल कृष्ण की माखनचोरी का और दूसरे में बालकृष्ण का लुक-छुपकर दौड़ने का व राज सिंहासन पर बैठ जाने का बड़ा ही मनोरम वर्णन है। कहीं विट्ठल के वर्णन का शब्द चित्र सुन्दर रेखाचित्र ही बन गया है।

उनके इस वर्णन में वस्तुनिष्ठ नयनाभिराम चित्र के मनोहर दर्शन होते हैं वे कहते हैं:

> 'दीन हीनों की मां के आज मैंने दर्शन किये। कमर पर हाथ रखकर वे ईंट पर खड़े हैं। मोतियों से सुशोभित मुकुट वे पहने हैं। उनका रूप व सौंदर्य अनुपम है, देखने योग्य हैं। वे पीला पीताम्बर पहने हैं। पांवों में सुंदर आभूषण है। नामदेव कहते हैं— भक्तों पर भगवान की कृपा की छाया रहती है और मैं भगवान के चरण-रज की वंदना करता हूं।'

फिर वे कहते हैं— 'मेरा पंढरीनाथ सांवला है। उसे देखते ही मन प्रसन्न हो जाता है। वही पंढरी नन्द का ग्वाला बन गया है।'

कृष्ण के सांवले रंग का स्मरण नामदेव ने बार-बार किया है। गवली के घर जन्म लेने वाले कृष्ण के स्वरूप का वर्णन करते हुए वे कहते हैं— 'बंशी बजाते हुए गोपाल गायों को चराते हैं। हे मेरे कुल देवता विट्ठल, तुम मेरे पास दौड़ते हुए क्यों नहीं आते ? शरीर पर चंदन का लेप लगाये, सुन्दर आभूषण पहने, गले में वैजयंती माला, हाथ में सुदर्शन व पीताम्बर पहने तुम ईंट पर खड़े हो।'

नामदेव के काव्य का मूल आधार भक्ति है और उसमें भक्ति की घटनाओं की मनभावन अभिव्यक्ति है। श्रीकृष्ण की बाल क्रीड़ा व उनके महात्म्य के अनेक शब्द चित्र बड़े ही मधुर हैं। उनमें कृष्ण के बचपन व विनोद का सरस वर्णन है। हिरण के सींग पकड़कर दौड़ने वाले और बिल्ली की पूंछ व गर्दन पकड़कर धूम मचाने वाले कृष्ण व बलराम, उनकी बाल लीलाओं को देख खिलखिलाकर हंसने वाली यशोदा व अन्य लोग एक-दूसरे पर पानी के फव्वारे छोड़ने वाले और पानी में अपना प्रतिबिम्ब देखने वाले कृष्ण के व उनसे सम्बंधित सारे वर्णन बहुत ही मनोहर हैं।

शब्दों का वैभव प्रकट करने व व्यक्ति चित्रण का बड़ा सामर्थ्य नामदेव की कविता में है। आज

जैसे यथार्थवादी चित्रण से उनका कोई विरोध नहीं है। इसीलिए कृष्ण के बचपन की विविध लीलाओं का उन्होंने उसी रूप में वर्णन किया है। किसी को चिढ़ाते हुए, कुत्ते को तू-तू कर बुलाकर उसके गले में हाथ डालते हुए कृष्ण-बलराम का मनभावन वर्णन उन्होंने किया है।

नामदेव के यथार्थ चित्रण की एक विशेषता और है। भाषा के सही स्वरूप की उपेक्षा नहीं करने वाले मराठी के प्रथम लाक्षणिक कवि नामदेव थे। छोटे बच्चों की तुतलाहट भरी भाषा उन्होंने अपने काव्य में ठीक वैसी ही रखी है। भावों को सही रूप में प्रकट करने वाली भाषा के उदाहरण उनके काव्य में कई स्थानों पर सहज ही मिल जाते हैं। उनके ऐसे कई गीत महाराष्ट्र में बहुत प्रसिद्ध हैं।

समय के साथ काव्य के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन होता जाता है। आजकल भावपूर्ण कविता की चर्चा करते समय उसके अंतर्गत प्रतिमा सृष्टि का विचार प्रमुखता से होता है। लेकिन प्रतिमा का यह अस्तित्व काव्य में बहुत पहले से ही रहता आया है। सात सौ वर्ष पहले नामदेव के काव्य में प्रतिमा सृष्टि के सहज दर्शन होते हैं और पारिजात की अधखिली कलियों जैसी ताजगी व सौंदर्य उसमें है। कहीं उसमें गजब की कोमलता है तो कहीं कठोरता भी। एक जगह वे कहते हैं— हे भगवान, सरोवर में खिले कमल के समान तुम्हारे नेत्र हैं।

यह पहले ही बताया जा चुका है कि प्रतिमा सृष्टि की रचना करने में नामदेव अद्वितीय है। कहीं-कहीं तो उनकी प्रतिमा सृष्टि बहुत ही उग्र व तेजस्वी हो जाती है। देखिये उनकी एक रचना का भाव—

> 'कीर्तन में बैठे मूर्ख को भाव व अर्थ कुछ भी नहीं समझ आता। वहां वह भगवान में ध्यान लगाने के बदले उल्लू की तरह इधर-उधर ताकता है। भजन नहीं सुनता। उसकी नजरें औरतों पर और ध्यान जूतों पर रहता है। नामदेव कहते हैं— मूर्खों का वर्णन कहां तक करूं ?'

मूर्खों को उल्लू कहकर उन पर किया गया तीखा प्रहार, शरीर को बताया गया काल का भोजन, नाग के मुंह में अमृत भी डालने पर वह विष बन जाता हैं— जैसी बातें भी उनके काव्य में बिखरी है।

कभी-कभी किसी सटीक दृष्टांत के द्वारा अपना भावार्थ वे बहुत ही सरल-सुगम कर देते हैं। परमेश्वर व भक्त के रूप में स्वयं का वर्णन करते हुए कहते हैं— जैसे हाथी के पैर पर मक्खी बैठी हो ! इस प्रकार वे मन की बात पूर्णता के साथ, बहुत कम शब्दों में और बड़ी सफलता से कह देते हैं। उनका एक अत्यंत प्रसिद्ध अभंग हैं— **पंढरी मोहर, विट्ठल माऊली'**। अर्थात पंढरपुर मेरा पीहर है और विट्ठल मेरी मां है। स्त्री के लिए मां व पीहर से बढ़कर भावनात्मक, निर्मल व मधुर इस दुनिया में और क्या है ? अपने काव्य में सटीक शब्द व प्रतिमा का उपयोग कर अपने आशय को वे बड़ा ही प्रासादिक बना देते हैं। मनुष्य के जीवन व्यवहार में होने वाले विचित्र विरोधाभास को व्यक्त करते समय भी वे इसी तरह की स्पष्ट शैली का प्रयोग करते हैं। अपने कार्यों व जीवन पर ध्यान न देकर दूसरों की टीका करने वालों के लिए नामदेव ने जो उदाहरण दिया है, वह एकदम सटीक है। उनके एक अभंग की कुछ पंक्तियों का अर्थ है— कसाई कई पशुओं को निर्दयता से काटता है, तब उसके मन में दया या करुणा थोड़ी भी नहीं होती, लेकिन किसी पशु की गर्दन काटते समय उसकी ऊंगली थोड़ी भी कट जाय तो वह 'मरा-मरा' कहकर चिल्लाता है।

सन्यास बाह्य स्थिति और वैराग्य मनःस्थिति है— यह समझाते हुए उन्होंने चंद्रबिंब का जो उदाहरण दिया है, वह भी अनूठा है। एक अभंग में उन्होंने इस बात पर बड़ी वेदना व्यक्त की है कि कीर्तनकार को वैरागी होना ही चाहिए पर वह वैसा होता नहीं। वह कहते हैं— 'चन्द्रमा व सूरज का आकार तो बनाया जा सकता है पर प्रकाश का चित्रण किया ही नहीं जा सकता। सन्यासी का स्वांग तो बनाया जा सकता है पर वैराग्य को जीवन में लाना कठिन है। नामदेव कहते हैं— कीर्तन करना तो सरल है पर प्रेम की विह्वलता लाना कठिन है।'

कभी-कभी उपमाओं की एक सुदीर्घ माला का प्रयोग कर वे अपने भावों को अपूर्व भव्यता प्रदान करते हैं। एक अभंग के भाव इस प्रकार हैं— ' साढ़े तीन हाथ की यह देह एक झोपड़ी के समान है। और सच तो यह है कि इस घरबार का मालिक कोई दूसरा ही है। आंधी व वर्षा आते ही यह झोपड़ी टूट पड़ेगी, दीवालें धंस जावेंगी, नींव खिसक जावेगी। ऐसे जर्जर घर के प्रति मन में प्रेम क्यों कर होना चाहिये।'' शैली, प्रतिमा, सरलता आदि गुणों से भरपूर उनका प्रसिद्ध अभंग है।

नामदेव की प्रतिमा सृष्टि में सागर, दादुर, वृक्ष, बेल, वर्षा, पानी, खेती-बाड़ी, अमृत, विष, चन्द्र, सूर्य, भुजंग या उलूक, केले का झाड़, मृगजल, अग्नि, हवा व दीप, काला रंग आदि जीवन व व्यवहार में आने वाले प्रतिमानों का उपयोग हुआ है। पर उन प्रतिमानों का अर्थ व संदर्भ भिन्न ही होता है। अत्यंत सहज रीति से प्रस्तुत प्रतिमा से अभंग कितना अच्छा बन जाता है, इसका एक उदाहरण इस प्रकार है:

> 'जैसे वृक्ष मान-अपमान नहीं समझता, वैसे ही सज्जनों का व्यवहार होता है। कई लोग वृक्ष की पूजा करते हैं। पर इससे वृक्ष को कोई आनंद नहीं होता। कई लोग वृक्ष को काटते भी हैं। पर वृक्ष न तो दुखी होता है और न उन्हें कहता है मुझे मत काटो। इसी प्रकार निंदा स्तुति को संतजन समान समझते हैं, पूर्ण धैर्यवान सागर के समान।'

संतों का माहात्म्य प्रकट करने वाले इस अभंग में वृक्ष की उपमा निर्वाह का कितनी अच्छी तरह से किया है, यह देखने योग्य है। यह अभंग सहज सुंदर है और ज्ञानदेव की प्रतिमा की जोड़ का है। भावपूर्ण काव्य के इतिहास में नामदेव के ऐसे अभंगों का बड़ा महत्व है।

नामदेव के काव्य की शैली गीत प्रधान है। अभंग छंद की रचना भी गेय पद्धति की ही होती है। नामदेव रचित ऐसे कई ध्रुवपद हैं जिनमें भावनाओं का मधुर रस सहज ही झरता है। उनके अनेक अभंगों की प्रथम पंक्ति ही मन मोह लेती है। कुछ प्रथम पंक्तियों का भावार्थ इस प्रकार है— 'भवसागर से मुक्त होते समय तू चिंता क्यों करता है।' यह देखो जीवन देखते-देखते बीत गया और जन्म-मरण से मुक्ति नहीं मिल सकी। ''सन्त भगवान की आत्मा हैं।'' स्वर्ण कलश चमचम चमकता है।' उनके अभंगों की प्रथम पंक्तियां ही हमारे मन में घर कर लेती हैं।

दृश्य, चित्र, श्रुति, स्पर्श आदि से सुसज्जित नामदेव का काव्य सरलता, शरणागति, आनंद, चिन्ता, दुख, संतोष जैसे मनभावन व श्रेष्ठ निवेदन से सुशोभित है। एक कवि के रूप में नामदेव का महत्व इन प्रसन्न व प्रासादिक अभंगों के कारण ही है। नामदेव के पहले भक्ति भावनाओं का इतना श्रेष्ठ प्रकटीकरण मिलता ही नहीं। उनके बाद भी वह बहुत ही कम मिलता है। यह कहा जाता है कि नामदेव का कार्य बाद में तुकाराम ने किया। परंतु तुकाराम के काव्य में सरलता के साथ-साथ कठोरता भी है। बुरी बात के संदर्भ में तुकाराम की वाणी चाबुक की फटकार जैसी है। पर इस

फटकार का अस्तित्व नामदेव की रचनाओं में नहीं है।

मराठी के समान ही नामदेव की हिन्दी की रचनाएं भी बड़ी लाक्षणिक हैं। उनमें भी काव्य व भावों का सौंदर्य बिखरा है।

8. हिंदी रचनाओं में नामदेव के दर्शन

नामदेव के हिंदी व मराठी काव्य में कितना साम्य है, इस पर पहले संक्षेप में विचार किया जा चुका है। हिन्दी काव्य में प्रतिभा व तत्वज्ञान के बारे में यहां विचार करेंगे। श्री झणकर की पुस्तक में करीब तीन सौ रचनायें हैं। पुणे विद्यापीठ की आवृत्ति में भी इतनी ही रचनाएं हैं। कुछ हिन्दी रचनाओं में पुनरुक्ति है। कुछ रचनाओं के रचयिता का पता नहीं चलता। कुछ रचनायें तो मराठी का अनुवाद ही लगती हैं। यह भी संभव है कि पहले नामदेव ने हिन्दी रचना लिखी हो और फिर मराठी में उसका अनुवाद किया हो। ऐसी कई रचनाओं में गजब का साम्य है, उन्हें सरसरी दृष्टि से देखने पर वे एक ही व्यक्ति द्वारा रचित लगती हैं।

ईश्वर का वर्णन करते समय एकत्व का तत्व उन्होंने कई बार व अनेक रीतियों से मंडित किया है। वे कहते हैं— '**घट-घट अन्तरि करब निरन्तरि केवल एक मुरारी।**' सब में उस मुरारी का ही निवास है— इस बात को उन्होंने अन्यत्र अलग तरह से लिखा है। एक पद में वे इसी बात को इस तरह कहते हैं:

इमै बीठलु उमै बीठलु
विठल बिनु संसार नहीं
थान थनंतरी नाका प्रणवै,
पुरी रहिउ तू सरब मही।

इधर-उधर जहां भी मैं देखता हूं, मुझे सर्वत्र विट्ठल ही दिखाई देते हैं। फिर मैं यह नैवेद्य किसे अर्पण करूं?— यह प्रश्न वे पूछते हैं। वे कहते हैं— 'विट्ठल के बिना इस जगत में कुछ नहीं है। विट्ठल सर्वत्र व्याप्त हैं। यह जग अपूर्ण है। केवल भगवान ही पूर्ण हैं। यह सारी सृष्टि भगवान ने ही बनाई है। वे भगवान बड़े ही दयालु हैं। अपने भक्तों के लिए वे बहुत कष्ट उठाते हैं।

नामदेव की मराठी रचनाओं में उपलब्ध भगवान के सगुण रूप के ध्यान व गान जैसा वर्णन उनकी हिन्दी रचनाओं में नहीं मिलता। हिन्दी रचनाओं में मूर्त के बदले अमूर्त की ओर ही उनका अधिक झुकाव दिखाई देता है। वे कहते हैं— 'स्वयं देव की सेवा जाने, तो देव दृष्टि ही सकल पछाने।' इसी संदर्भ में उन्होंने कहा है कि आत्माराम की पूजा ही ईश्वर की पूजा है।

हिन्दी रचनाओं में भगवान के समान गुरु के महत्व का वर्णन उन्होंने विस्तारपूर्वक किया है। इसमें पुनरावृत्ति भी है— '**जह अनाहत सूर उजारा तह दीपक जलै छंछारा। गुरु परसादी जानिआ...**'

सूर्य के उदय होते ही दीपक के समान जग प्रभावहीन हो जाता है। नामदेव कहते हैं— इसका

कारण गुरू कृपा ही है। गुरू की कृपा से दृष्टि प्राप्त करने वाला शिष्य गुरू से एकाकार हो जाता है। उन्होंने कहा है— **'गुरू चेले हैं मनु मानिआ, जनु नामा ततु परछानिया।'**

गुरू शिष्य के उदात्त सम्बंध के बारे में नामदेव के हिन्दी काव्य में अनेक संदर्भ मिलते हैं।

जउ गुरूदेउ त मिलै मुरारी। जउ गुरूदेउ त उतरै परि।
जउ गुरूदेउ त अमृत देही। जउ गुरूदेउ त उतरै परि।।
जउ गुरूदेउ अवर नहि जाई। नामदेव गुरु की सरणाई।

गुरू के कारण भवसागर को पार किया जा सकता है और गुरू की कृपा से ही जन्म-मरण के फेरे से मुक्ति मिलती है। इसी कारण वे कहते हैं— गुरू और उनकी शरण में पूर्णरूप से जाओ। वे यह भी कहते हैं कि गुरू के कारण ही भगवान की प्राप्ति होती है, गुरू के कारण वाणी अमृतमय होती है। गुरू के रूप में कृपा रूपी संजीवनी ही मानो प्राप्त हो जाती है। इसके बाद किसी वैद्य की आवश्यकता ही नहीं रहती— **''गुरू मिल्यौ बैद ब्रिथा गई दूरी।'** गुरू तो निरपवाद रूप से संत ही होते हैं। इसी कारण संतों के कार्य व उपकारों का वर्णन हिन्दी रचनाओं में कई स्थानों पर मिलता है। उनके ये उद्धरण कई स्थानों पर मिलते हैं— संतों से बहुत कुछ लेना चाहिये व बहुत कुछ देना भी चाहिए। सत्संगति से हो भवसागर पार किया जाता है, संत तो मानो माता-पिता ही होते हैं, संतों की कृपा से मनुष्य को भगवान की प्राप्ति होती है और भक्ति करने वाले को तारने का कर्तव्य भगवान के समान गुरू का भी होता है।

मराठी के समान हिन्दी में भी आचार-विचार का दिग्दर्शन उन्होंने विस्तार पूर्वक व बड़ी सूक्ष्मता से किया है। भजन का महत्व उन्होंने कई बार बताया है।

सिमरि सिमरि गोविन्द,
भजु नामा तरसि भवसिंधु।।

भजन करने से सारे पुण्य प्राप्त होते हैं। भजन रूपी भक्ति व मुक्ति के वस्त्र पहनने वाले को ब्रह्मपद प्राप्त होता है—**'भगति मुकति का पटा लिबाया, पूरण पारब्रह्म पद पाया।।** ब्रह्म ही सत्य है, पारम्परिक विचार उन्होंने कई जगहों पर प्रकट किया है। वे कहते हैं:

> सामान्य मनुष्य तीर्थयात्रा व यज्ञ आदि पर ही ध्यान देता है, पर इन कठिन मार्गों के देखते भजन का मार्ग ही सबसे सरल व अच्छा है। भक्तों में भी खरे व खोटे भक्त होते ही हैं। ढोंगी महन्तों की मराठी व हिन्दी रचनाओं में भी उन्होंने अच्छी खबर ली है। वे चिढ़कर कहते हैं कि झूठे देवी देवताओं को पूजने वालों की जमकर पिटाई करनी चाहिए। उनकी ये सारी रचनायें अपूर्व ही हैं।

एक जगह वे कहते हैं—**'भैउ भूत सीतला धावै, खर बाह्य उदू छार उड़ावै।।'** जो कोई भैरव, भूत व सीतला की पूजा करता है, वह मानो गधे पर बैठकर धूल उड़ाता है और **'महामाई की पूजा करै। नर से नारि होई अउतरै।।'** जो महामाया की पूजा करता है, वह पुरूष होते हुए भी स्त्री ही है। यह सब लिखने के बाद वे कहते हैं कि सब देवों के बदले केवल राम को ही मैंने अपनाया है। उनकी उक्त रचना का आशय यही है कि सबको गुरू की कृपा प्राप्त कर राम की भक्ति करना चाहिये।

नामदेव की मराठी रचनाओं में तुर्कों का उल्लेख है। हिन्दी रचनाओं में मंदिर मस्जिद कई जगह आये हैं।

हिंदू पूजै देहुरा। मुसलमानु मसीत।
नामे सोह सेविया। जह देउरा न मसीत॥

अर्थात् हिंदू मन्दिर को व मुसलमान मस्जिद को मानते हैं पर नामदेव तो इन दोनों से ऊपर हैं। वे मंदिर-मस्जिद किसी को नहीं मानते। वे तो केवल भगवान को ही मानते हैं।

तत्कालीन धार्मिक मान्यताओं को देखते हुए नामदेव के ये विचार अभूतपूर्व व क्रांतिकारी ही कहे जावेंगे। नामदेव के अन्य उपदेश इतने क्रांतिकारी नहीं हैं। अन्यत्र वे कहते हैं—सांसारिक बातों में स्थायित्व नही है इसलिए राम का स्मरण करो, शून्य समाधि में खो जाओ, अहंकार से भरे कर्मों से बंधनों का निर्माण होता है, भगवान का साक्षात्कार करने वाला ही उस सुख का अनुभव कर सकता है, अन्य नहीं, राम-नाम का स्मरण करने वाली जिह्वा, कामनाओं का त्याग और द्वैत नष्ट होने पर मन को चिर शांति प्राप्ति होती है।

इस प्रकार के उपदेश नामदेव ने जन-साधारण को अपनी रचनाओं के माध्यम से किये हैं। नामदेव के भगवान भी यही कहते हैं कि वैष्णवों में व उनमें कोई भेद नहीं है और नाम स्मरण करने में एकाग्रता आवश्यक है अन्यथा यहां जन्म लेने वाला देह यहीं नष्ट हो जाता है। ये विचार नये नहीं हैं। पर उन दिनों में भाषा समझने की भारी असुविधाओं व विभिन्न भाषाओं में चल रहे अच्छे-बुरे के झगड़ों को देखते नामदेव द्वारा इस प्रकार के विचारों को प्रस्तुत करना बड़े गौरव की ही बात मानी जायेगी।

हिन्दी में इस प्रकार के विचारों का प्रस्तुतीकरण तब एक सर्वथा नई क्रांतिकारी बात थी। हिन्दी में भक्ति काव्य के जनक नामदेव माने जाते हैं; लेकिन उनकी मराठी व हिन्दी रचनाओं की तुलना करने पर हिन्दी रचनायें थोड़ी हल्की लगती हैं। हिंदी रचनायें संख्या में भी बहुत कम हैं। हिंदी रचनाओं में काव्य की खोज करनी पड़ती है जबकि मराठी में वह भरपूर है।

भगवान के त्रिगुणात्मक व सर्वव्यापी स्वरूप को समझाते हुए वे कहते हैं:

जिउ आकासै पंखि अलौ खोज निरखिउ न जाई।
जिउ अलमाझे माछलो मारगु पेखणौ न जाई॥
जिउ आकासै घडुअलो मृग-त्रिसना भरिआ।
नामेचे सुआमी बीठलो जिन तीने जरिआ॥

जैसे आकाश में उड़ने वाले पक्षी को राह ढूंढनी नहीं पड़ती, पानी में तैरती हुई मछलियां भी जैसे राह नहीं भूलती या मृगजल से जैसे आकाशरूपी घट भरा दिखाई देता है, वैसे ही नामदेव के प्रभू त्रिगुणात्मक हैं।

उनके ये विचार उनके काव्य रूप के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। साधारण दृष्टांतों से अपनी बात अत्यंत सरलता से कहने की उनकी विशेषता मराठी के समान हिंदी में भी है। भगवान का स्वरूप जानने पर भी उसका वर्णन किया ही नहीं जा सकता। इस बात को वे बड़ी सरलता से कह देते हैं—'**गुंगे महा अमृत रस चाखिआ पूछे कहनु न जाइ हो।**' याने अमृत की मिठास व आनन्द गूँगा समझता तो है पर उसका वर्णन नहीं कर सकता।

भगवान श्रीराम के दर्शन कितनी तन्मयता से करना चाहिए, यह बताते हुए वे कहते हैं —

जिउ बिराई हरै परनारी।
कउड़ा डारत हिरै जुगारी।।

कामी पुरूष किसी स्त्री को जैसे घूरता है या कोई जुआरी पांसे डालते समय जितना तन्मय रहता है, वही एकाग्रता श्रीराम के प्रति होनी चाहिये।

आठ चरणों के एक अभंग को उन्होंने अष्टदल कमल कहा है—'**आपै पवन आपै पानी। आपै बरिषै मेहा**'। भगवान ही पवन व पानी है और पानी बरसाने वाले मेघ भी वे ही हैं। यह उदाहरण बड़ा ही सहज व सुंदर है। अन्यत्र वे कहते हैं—'हंस के लिए जैसे मानसरोवर है वैसे ही मनुष्य के लिये भगवान का नाम है। माया रूपी जलाशय है व मन रूपी मछली हैं।' ऐसे श्रेष्ठ रूपकों से सज्जित काव्य में नामदेव की प्रतिभा के दर्शन होते हैं।

नामदेव की हिंदी रचनाओं के निम्नांकित दो उदाहरण उनकी काव्य प्रतिभा का परिचय करा देने के लिये पर्याप्त है—

झिलिमिलि झिलिमिलि झिलिमिलि तारा।
सो झलिमिलि तिहुं पियारा।।टेक।।
रहै अकास पडै, दृिष्टि नहीं दृिष्टि
पकड़ू या न जाई न आवै मुष्टी।।1।।
दिपंक पषै तेल बिन बाती।
जोति स्वरूप बलै दिन राती।
भगत नामदेव अमर पद परस्या।
पिंड भया मुकाति तया तत दरस्या।।3।।

आकाश में झिलमिल झिलमिल तारा चमकता है। वह तीन लोकों से भी सुन्दर है। आकाश का वह तारा जल्दी दिखाई नहीं देता। वह सदा चमकता रहता है पर मुट्ठी में नहीं आता। तेल व बाती नहीं होने पर भी वह दीपक दिन-रात अखंड प्रकाश देने वाली ज्योति है। नामदेव कहते हैं, अमर पद को स्पर्श करने पर देहमुक्ति के साथ-साथ भगवान के दर्शन होते हैं।

उनकी दूसरी रचना इस प्रकार है:—

तुम बिन धरि येक रहूं नहि न्यारा,
सुन यह केसव नियम हमारा।।
जहां तुम गीरीवर, तहां हम मोरा।
जहां तुम चन्दा तहां में चकोरा।।
जहां तुम तरूवर तहां में पंछी।
जहां तुम सरोवर तहां मैं मच्छी।।
जहां तुम दिवा तहां मैं बत्ती।
जहां पंथी तहां मैं साथी।

तहां तुम शिव जहां मैं बेलपूजा।
नामदेव कहे भाव नहीं दूजा।।

अर्थात् केशव, मेरा नियम सुनो। तुम्हारे बिना मैं एक पल भी नहीं रह सकता। यदि तुम पर्वत हो तो मैं मोर हूँ। तुम चांद हो तो मैं पक्षी हूं। तुम सरोवर हो तो मैं मछली और तुम दीपक हो तो मैं बाती हूं। तुम यात्री हो तो मैं तुम्हारा साथी हूं। तुम यदि शिवजी हो तो मैं बेलपाती हूं। नामदेव कहते हैं, हे भगवान, तुम्हारे सिवा मेरा अलग अस्तित्व ही नहीं है।

नामदेव की ये सारी रचनायें गेय हैं। उनमें तालबद्धता है। उनकी इन रचनाओं में भगवान को श्रेष्ठ व स्वयं को छोटा मानकर आत्मीयता का नाता जोड़ा गया है। यह सम्बन्ध जोड़ने की मानो नामदेव की रीति ही है।

नामदेव की रचनाओं में सुन्दर भावनाओं के ऐसे ही मनोरम चित्र हैं। उनकी हिंदी रचनाओं में मराठी जैसी रागदारी-व संगीत का वैभव भी है। उनके काव्य में भक्ति रस भरपूर है। उनकी मराठी रचनाओं में जितनी विविधता है, उतनी हिंदी में नहीं है फिर भी इन दोनों भाषाओं की उनकी रचनाओं में समानता व भावों का सौंदर्य स्पष्ट दिखाई देता है।

9. समापन

मनुष्य की नैसर्गिक वृत्ति मोह की ओर झुकती है। जब तक वह मोह-मर्यादा के बंधनों को तोड़ नहीं देता, तब तक इस संसार में ही वह सुख समाधान मानता है। पर हर क्षण उस मर्यादा के टूटने की सम्भावना बनी रहती है। ऐसे समय में प्रमादी मनुष्य को प्रमाद से दूर हटाना आवश्यक होता है। यह कार्य प्रमुख रूप से सन्त-महात्मा करते हैं। सन्मार्ग पर से मनुष्य अन्यत्र भटक नहीं जावे, इसलिए उसके मन पर धीरे-धीरे संस्कार करने पड़ते हैं। ये संस्कार माता-पिता, गुरूजन व मित्र व्यक्तिगत आधार पर करते ही हैं। सत्तासीन लोग शासकीय तंत्र द्वारा समाज को नियंत्रित करते हैं। पर इस नियंत्रण के पीछे प्रेम भी रह सकता है, शक्ति तो रहती ही है। प्रेम व ममता के द्वारा मनुष्य को विकृतियों से दूर करने वाली सामाजिक संस्था के रूप में हमारे साधु संत महत्वपूर्ण कार्य करते आये हैं।

सबसे पहले तो मनुष्य को श्रद्धालु और फिर ध्येयवादी बनाना आवश्यक होता है। यह एक खुली बात है कि सुख-भोग से मनुष्य को और पश्चिम व पाश्चात्यों के अनुकरण से मन को शांति मिलती ही नहीं और शांति का अभाव स्पष्ट दिखाई देता है। यह बात भी सच है कि कभी-कभी यह अभाव मनुष्य को बहुत अखरता है और जीवन खोखला लगने लगता है। ऐसे समय में ये साधु संत व उनके उपदेश अंधेरी रात में काल के समान ऊंची उठने वाली लहरों के तूफान में अटल खड़े दीप स्तम्भ के समान दिखाई देते हैं। विश्व की नीति निर्माण करने वाले ये सन्त जाति, धर्म, देश आदि की मर्यादा को लांघ कर बहुत आगे पहुंच हुए होते हैं। वे किसी एक व्यक्ति, समाज व देश के नहीं रहते। नामदेव इसी श्रेष्ठ स्थिति के पहुंचे हुए साधु पुरुष थे। महाराष्ट्र के संत पंचक व अन्य सन्तों ने इस भूमि में नीति स्थापि करने का महत् कार्य किया था। भागवत सम्प्रदाय की पताका सही अर्थों में नीतिवर्धन की ही पताका थी। इस पताका को अपने कंधे पर रखकर नामदेव निकले थे। उन्हें लम्बी आयु मिली थी इसीलिए इस बात की पूरी संभावना है कि अपनी साधना की सफलता उन्होंने स्वयं अपनी आंखों से देखी व कानों से सुनी होगी। उनके अनेक देशवासियों का धर्मांतर व धार्मिक पतन भी उनके कार्यों के कारण अवश्य रुका होगा। ये कार्य करते समय उनके सामने कई बाधायें भी आई होगी पर उन सबको मात देकर उन्होंने कार्य किया, यह बड़े गौरव की बात है।

श्रेष्ठ समाज के निर्माण में सन्तों का बहुत बड़ा भाग रहता है, क्योंकि चरित्र, नीति, समता, सामाजिक न्याय, जीवन के मूल्यों पर श्रद्धा, उदार तत्व ज्ञान जैसी बातों का सहज उद्घोष संतजन करते ही रहते हैं। उनके उपदेश मनुष्य जीवन में साकार नहीं होने वाले आदर्श मात्र ही नहीं रहे हैं, क्योंकि मनुष्य की शक्ति का पूरी तरह से ध्यान रखकर ही ये उपदेश दिए गए हैं। इन उपदेशों की

ओर मनुष्यों का ध्यान स्वाभाविक ही जाता है, क्योंकि उनके द्वारा पतितों के उद्धार का आश्वासन संतों ने बार-बार दिया है।

संतों के विषय में जो उद्‌गार नामदेव ने प्रकट किये हैं, वे पूर्ण रूप से स्वयं नामदेव पर ही लागू होते हैं। नामदेव का यह कथन सवा सोलह आने सही है कि 'संत भगवान की आत्मा है'। इस वचन को यदि उलट दिया जाय तो स्वयं नामदेव के जीवन का वह वर्णन ही लगता है। उपदेशक, प्रचारक व कवि के रूप में वे स्थापित थे। यह सही है कि नामदेव का कार्य करने वाले तुकाराम के काव्योपदेश का आधार नामदेव का काव्योपदेश ही है।

स्वयंसिद्ध श्रेष्ठता और कालजयी साहित्य के वैभव के कारण नामदेव का स्थान विश्व के महान पुरुषों में सुरक्षित हो गया है। अमृत से भी सरस साहित्य इस महान सन्त कवि की एक ऐसी विशेषता है जो इस भारत की अमूल्य निधि है।

10. अमृत वाणी

नामदेव के मराठी अभंगों का हिन्दी भावार्थ

1. हे भगवान, आपके बिना मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता। आपके बिना मेरी दशा वियोग में तड़पते चक्रवात पक्षी की तरह हो गई है। बछड़े को नहीं देखने पर गाय और बिना पानी मछली जैसे तड़पती है, वैसी ही स्थिति मेरी है। नामदेव कहते हैं, हे भगवान, मेरा मन तुम्हारे बिना सदा दुखी रहता है।

2. बालक कृष्ण मृग के सींग पकड़कर नाचते हैं। यह देख लोग प्रसन्न हो खूब हँसते हैं। भोजन करते समय बिल्ली को देखकर कृष्ण उसका गला पकड़ते हैं व बलराम पूंछ पकड़कर खींचते हैं। यशोदा दौड़ती वहां आती हैं और यह सब देखकर बहुत मुदित होती है। ग्वालनें यह सब बड़े आनन्द से देखती हैं। बन्दर के दोनों कान कृष्ण पकड़ लेते हैं। यह देख रोहिणी कहती है—बेटे, वह तुझे काट लेगा! अरे, मैं इसे कैसे संभालूं!' पानी में अपना प्रतिबिम्ब देखकर कृष्ण पानी उड़ाते हैं और गोरस भूमि पर फेंकते हैं। नामदेव कहते हैं—जो सबके स्वामी हैं, वह कृष्ण पक्षियों को पकड़ने की लीला करते हैं।

3. कृष्ण परब्रह्म व निष्काम हैं। वे ग्वालों के घर माखन की चोरी करते हैं। कृष्ण ने चांदी के गहने पांवों में पहने हैं। ग्वालिनें कहती हैं—इस नटखट कृष्ण को पकड़ लो।

लुकते-छिपते कृष्ण राजभवन में जाते हैं और नन्द को सिंहासन पर से हटाकर स्वयं वहां बैठ जाते हैं। इसी प्रकार देवताओं को भी सिंहासन से हटाकर वे खुद वहां बैठ जाते हैं।

हे कृष्ण, तुम्हारे दर्शन करने के लिए बड़ी तपस्या और कई पुण्य करने पड़ते हैं। फिर भी तुम्हारी माया समझ में नहीं आती।

नामदेव कहते हैं—भगवान, मुझे यह वर दीजिये कि अनेक जन्मों तक मैं आपके चरणों की सेवा करता रहूं। मुझे और कुछ नहीं चाहिए।

4. काले बादलों की घनघोर घटाएं छा गई हैं। भीषण गर्जना के साथ उनमें बिजली कड़कती है। कृष्ण के दर्शन करने के लिए ये बादल कैसे रिमझिम बरस रहे हैं। आनन्दित हो मोर नाच रहे हैं। नीलकंठ भी प्रेम में आनन्द विभोर है। नामदेव कहते हैं—भगवान की हम पर कितनी कृपा है। मेरा मन तो उनमें ही लगा है।

5. मेरा ध्यान सांवले-सलोने कृष्ण में लगा है। हे कृष्ण, तुम जल्दी दौड़ते हुए आओ। गवली के पुत्र कृष्ण के शरीर पर चन्दन, कपाल पर कस्तूरी और कमर में सुन्दर फूल सुशोभित हैं। उनके सांवले सुन्दर शरीर की शोभा अवर्णनीय है। तुलसी की कोमल मंजरियां उनके कानों में व तुलसी की सुन्दर माला उनके गले में सुशोभित है। सुन्दर-सुन्दर गोपियां उनके साथ हैं। छोटी-सी सुन्दर काठी उनके हाथ में है और सुन्दर कम्बल उनकी पीठ पर है। वृंदावन में वे मधुर लीलाएं करते हैं। नामदेव कहते हैं — मेरे स्वामी कृष्ण गायों की रक्षा करते हैं और विविध रंगों की गायों को चराने ले जाते हैं।

6. निर्गुण ब्रह्म को प्राप्त करने का साधन भक्ति का साधन भक्ति की सहायता से ही पंढरपुर में विट्ठल (भगवान) के दर्शन होते हैं। विट्ठल के रोज दर्शन करने से उनका नित्य नया रूप दिखाई देता है और त्रिविध ताप भी नष्ट हो जाते हैं। भगवान के चौबीस व हजार नाम हैं। पर भगवान का निर्गुण व शुद्ध-शुद्ध रूप अलग ही है। भगवान के उस रूप का वर्णन वेद व पुराण भी नहीं कर सकें। वे भी वर्णन करते-करते थक गये। भगवान का निवास यदि हृदय मे हो तो उनकी भक्ति का सुख मिलता है, यह बात भक्त पंडलिक ने अपने आचरण से सिद्ध करके बता दी, नामदेव कहते हैं—हम तो अनाथ हैं। हमारे संकटों का हरण करने का साधन तुम्हारी भक्ति ही है। हम तुम्हारे दर्शन की बाट अपलक देख रहे हैं।

7. सबसे बड़ा सुख भगवान के दर्शन में ही है। उनका दर्शन करते ही भूख-प्यास आदि सब मिट जाती है। भगवान विट्ठल मां के समान है। उनसे मिलते ही सारी इच्छा-आकांक्षायें दूर हो गई हैं। चकोर चन्द्रमा को और मयूर मेघों को देखकर जैसे आनन्द विभोर हो जाता है, वैसे ही मन में आनन्द छा गया है। नामदेव कहते हैं—विट्ठल के दर्शनों से सारे पाप व ताप नष्ट हो गए हैं ओर जो सुख मिला है, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

8. दीन जनों की मां को मैंने आज देखा। विट्ठल ही वह मां है। कमर पर दोनों हाथ रखकर ईंट पर वे खड़े हैं। रत्नों से सुशोभित मुकुट वे पहने हैं और उसमें मोतियों का गुच्छा सुशोभित है। वे बहुत सुन्दर हैं। उनके गले व चरणों में सुन्दर आभूषण है। पीला पीताम्बर पहने हैं। वे भगवान भक्तों के साथ सदा छाया की तरह रहते हैं। नामदेव उनके चरणों की वंदना करता है।

9. नामदेव कहते हैं,—आषाढ़ और कार्तिक की एकादशी मेरे जीवन के सबसे सुखदायी दिन होते हैं। पंढरपुर में तब भगवान पांडुरंग की सब सुख देने वाली शोभा देखकर मेरा जीवन सार्थक होता है। वहां सन्तों के आलिंगन-मिलन से अपार सुख मिलता है और सारे दुख संकट समाप्त हो जाते हैं। मन में पांडुरंग के निवास से सारे सुख प्राप्त होते हैं। उस सुख के सामने अन्य सारे सुख तुच्छ हैं।

10. नामदेव कहते हैं—पंढरपुर का महत्व वैकुंठ से भी अधिक है। भगवान ने पहले पंढरपुर की

न बाद में बैकुंठ की रचना की। जब यह संसार नहीं था, तब पंढरपुर विद्यमान था। जब गोदावरी व गंगा भी नहीं थी तब पंढरपुर के पास रहने वाली चन्द्रभागा थी। उस चन्द्रभागा के किनारे पांडुरंग का अत्यंत सुन्दर मन्दिर है। धन्य है वह मन्दिर। सारा भू-मंडल नष्ट हो जाएगा पर पंढरपुर बचा रहेगा। पंढरपुर के नीचे सुदर्शन है। सुदर्शनधारी कृष्ण का निवास पंढरपुर में है। अतः पंढरपुर अविनाशी है। नामदेव कहते हैं—ऐसे पंढरपुर को व उसके निवासी भगवान के दर्शन मैंने किए हैं।

11. नामदेव कहते हैं— विठोबा के गांव में दौड़ता जाऊँगा और वहां उनके चरणों में दंडवत करूंगा। उनके दर्शन करते ही राह की मेरी सारी थकावट दूर हो जायेगी और पाप भी नष्ट हो जाएंगे। विठोबा के दर्शन करके बड़े आनन्द से लौटता हुआ मैं उनके महाद्वार तक जाऊंगा और तब सामने से खुद विठोबा मुझे लेने आएंगे। वे मुझे बड़े प्रेम से उठावेंगे और पीताम्बर से मेरे मुंह पर आया पसीना पोछेंगे। फिर वे अपने हाथ से मेरा मस्तक ऊंचा करेंगे व अपना अभय हस्त मेरे मस्तक पर रखेंगे।

नामदेव कहते हैं—रुक्मणी व सत्यभामा माताओं ने बालक जैसा मुझे गोद में उठा लिया और मेरे सारे दुख दूर हो गये।

12. नामदेव कहते हैं— सारे सुख चन्द्रभागा के किनारे इकट्ठे हो गए हैं। हमारा पंढरपुर कामधेनु है। यहां संतों को सदा प्रेमामृत मिलता है। इस कामधेनु से नित्य नया व परम सुखदायक दूध रूपी अमृत प्राप्त होता है। इस कामधेनु के धर्म, अर्थ, काम वो मोक्ष रूपी चार थन हैं। धन्य है भक्त पुंडलिक को, जो दूध दुहता है। सन्तों की पुण्याई से वह मधुर दूध बढ़ता ही रहता है, कभी कम नहीं होता। वहां सदा भगवान के नाम की धुन लगती रहती है। सदा भक्ति का सुखदायी वातावरण छाया रहता है। नामदेव कहते हैं—मैं बड़ा भाग्यवान हूं क्योंकि भक्ति रूपी अमृत का मैं छककर पान कर रहा हूं।

13. जहां भी जाओ, वहां पत्थर और सुन्दर लगे पत्थरों के रूप में दिखाई देते हैं। नामदेव कहते हैं— 'भगवान का दर्शन कराने वाला गुरू मुझे अभी तक नहीं मिला। पत्थर का भगवान भला कैसे बोलेगा? मैं भगवान का नाम लेते-लेते थक गया। जहां जाता हूं, वहां पत्थर की पूजा होते देखता हूं। पर मेरे भगवान तो मेरे हृदय में हैं और उन भगवान को कभी भी छोड़ूंगा नहीं।

14. नामदेव कहते हैं—तुलसी का महत्व सब फूलों से बढ़कर है। वृंदावन की विशेषता तुलसी से है, देवताओं ने भी तुलसी की वंदना की है, तीनों लोकों में तुलसी की वंदना होती है। तुलसी माता की सदा वंदना करनी चाहिए। तुलसी संतों की छाया है। तुलसी के पास भगवान कृष्ण सदा रहते हैं। भूमि पर पड़े तुलसी दल को मस्तक पर रखने से करोड़ों तीर्थों का फल मिलता है। जिस घर में तुलसी नहीं है, वह घर रहने योग्य नहीं है। वहां भगवान की आज्ञा से यमदूत रहते हैं। जिस घर में तुलसी वृन्दावन हो उस घर पर भगवान प्रसन्न रहते हैं और उनकी आज्ञा से वहाँ यमदूत पैर नहीं रखते। तुलसी वृन्दावन की जो परिक्रमा करते हैं और अन्त समय में जो तुलसी का नाम लेते हैं,

वे जन्म मरण से मुक्त हो जाते हैं। जो लोग तुलसी वृन्दावन का दर्शन करते हैं, वे वैकुंठ में जाते हैं। तुलसी की माला गले में पहनने वालों को भगवान विष्णु भी प्राप्त होते हैं। तुलसी के पौधे को जो लोग पानी देते हैं, उनके सारे दोष दूर हो जाते हैं। ब्रह्मा आदि देवताओं से भी तुलसी का महत्व अधिक है, क्योंकि तुलसी भगवान को चढ़ाने वाला जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है। भगवान को तुलसी बहुत प्रिय है। उन्हें और कोई पुण्य नहीं चाहिए। नामदेव कहते हैं— कि मुझे यही भक्ति दो कि मैं आपको सदा तुलसी-दल अर्पण करता हूं।

15. बड़ी सरलता से व फोकट में मिलने वाली तुलसी को भगवान को चढ़ाओ। इससे ध्रुव के समान-ऊंचा व श्रेष्ठ स्थान मिलता है। सबको छोड़ केवल विट्ठल की शरण में जाओ। व्यर्थ इधर-उधर भटक कर अपना जन्म मत गवाओ। नामदेव कहते हैं— देखो विट्ठल तो भक्तों के ऋणी हैं।

16. इस संसार में सब नश्वर है। जो पैदा होता है, उसका अन्त होता ही है। इसमें किसी तरह का संशय नहीं है। पर भगवान व उनका नाम अमर है। भगवान का नाम जपने व संतकृपा से जीवन सर्वोत्तम हो जाता है। इसलिए संतों की शरण में जाकर सदा भगवान का स्मरण करना ही सबसे अच्छी बात है। नामदेव कहते हैं—'संतों की कृपा से मैं सदा भगवान का नाम स्मरण करता हूं।'

17. कीर्तन से भगवान कितने सुखी होते हैं, इसका वर्णन करना भी कठिन है। कीर्तन करने वाला आदमी साधारण हो या बड़ा, उसके द्वारा भगवान का नाम लेते ही भगवान उसके पास दौड़ते हुए पहुंच जाते हैं। वे उस भक्त के पास खड़े रहते हैं और उस नाम संकीर्तन में वे भी भक्त के साथ आनन्द विभोर हो जाते हैं। नामदेव कहते हैं कि भगवान को कीर्तन इतना प्रिय है कि वे वहां तुरंत पहुंच जाते हैं।

18. ब्राह्मण, शूद्र, वैश्य या कोई भी पुरुष व महिला हो, सबका एकमात्र आधार भगवान का नाम ही है। भगवान के नाम स्मरण के बिना मनुष्य की और कोई गति नहीं है। मनुष्य के सिवा अन्य योनियों में जन्में जीव बोल नहीं सकते। वे भगवान का नाम नहीं ले सकते। चौरासी लाख योनियों के बाद मनुष्य का दुर्लभ जन्म मिलता है। अतः मनुष्यों को भगवान का नाम जप करना चाहिए। नामदेव कहते हैं कि सद्गुरु के पास से भगवान की जो भक्ति मिलती है, उसके लिए कोई कीमत नहीं चुकानी पड़ती।

19. खेत में थोड़े से ही बीज डालने से कई गाड़ियां भर कर अनाज पैदा होता है। इसी प्रकार केवल एक बार हरि का सच्चे मन से नाम लेने पर अनेक जन्मों के पाप व संकट समाप्त हो जाते हैं। साधारण लोग भी कीर्तन से तर जाते हैं। नामदेव कहते हैं कि कुछ भी नहीं जानने वाले व इतना ही नहीं मूर्ख भी भगवान का नाम भक्तिभाव से लेने पर तर जाते हैं।

20. भगवान की आत्मा संत हैं। इसका कारण यह है कि सब कुछ त्याग कर संत जन केवल

भगवान के चरणों का ही ध्यान करते हैं। नाम स्मरण से भगवान के दर्शन सहज ही हो जाते हैं, और सारे पाप, विकार व श्रम भी नष्ट हो जाता है। जो भक्त नहीं है, उन्हें सब तरह के संकट सहने पड़ते हैं, क्योंकि वे नाम का महत्व नहीं समझते हैं। अभक्तों को नाम महत्व समझना चाहिए। नामदेव कहते हैं कि स्मरण की अग्नि से करोड़ों पाप भस्म हो जाते हैं।

21. पारस के स्पर्श से जैसे लोहा स्वर्ण हो जाता है और कीट जैसे भ्रमर बन जाता है, वैसे ही सत्संग से भगवान की प्राप्ति होती है। अग्नि से मिलने पर जैसे कोई वस्तु सदा के लिए अग्नि में और सरिता जैसे सागर में विलीन हो जाती है उसी प्रकार सत्संग से भगवान की प्राप्ति होकर उसमें स्थाई रूप से विलय हो जाता है। फिर भक्त और भगवान में कोई अन्तर नहीं रहता। नामदेव कहते हैं—हे भगवान, तुम ही मेरे पिता हो। मुझे सत्संग का वरदान दीजिये। इसके सिवा मैं तुमसे और कुछ नहीं मांगता।

22. जो अपने शरीर के प्रति उदासीन हो, जिनका हृदय प्रेम से भरपूर हो और राम व कृष्ण की भक्ति जिनके स्वभाव में हो, वे ही संत हैं। सन्तों के ये ही लक्षण है। ऐसे सन्तों के चरणों को मैंने देखा। उन चरणों के दर्शन से अनेक जन्मों के करोड़ों पाप नष्ट हो जाते हैं।

जिनके हृदय प्रेम से भरे हैं और जो कृष्ण को एक क्षण भी नहीं भूलते, ऐसे सन्तों के आंगन में निरर्थक सांड के समान मैं पड़ा रहूंगा। तब हे केशव, तुम मेरी उपेक्षा कैसे करोगे?

जो सदा तुम्हारा ध्यान करते रहते हैं और सारे चराचर में तुम व्याप्त हो, ऐसा समझने वालों की जूठन मांगकर मैं खाऊंगा, क्योंकि इससे मुझे पंढरी के दर्शन होंगे।

जो इस प्रकार आचरण करते हैं, भगवान उन्हें कभी अपने से दूर नहीं करते। नामदेव कहते हैं—ऐसे सन्तों से मुझे कभी दूर मत करना।

23. भगवान के भक्त दीर्घायु हों। सन्तों को इच्छायें, कामनायें कभी न सतावें। अहंकार उन्हें कभी स्पर्श नहीं करें। नामदेव कहते हैं—जिस मुख पांडुरंग का स्मरण हो, उसका कल्या हो

24. भगवान की प्राप्ति का सूत्र हमें मिल गया है। वह है भगवान की भक्ति। भक्ति से ही भगवान मिल जाते हैं। हम तो भक्ति करेंगे। भगवान भाव के भूखे हैं। भक्तों के कारण बैकुंठ छोड़कर वे भक्तों के पास आ जाते हैं। सत्संग की साधना आवश्यक है। भगवान को हृदय में रखना चाहिये, फिर वे कहीं भी जा नहीं सकेंगे। उनके चरणों में हमारा मस्तक झुका रहेगा। नामदेव कहते हैं—उनके चरण हमारे गले में अटके रहेंगे, तो वे जायेंगे कैसे?

25. वृक्षों के समान सज्जनों का आचरण रहता है। मान-अपमान वृक्ष नहीं मानता। वैसे ही सज्जन इन पर ध्यान नहीं देते। कोई यदि वृक्षों की पूजा करता है तो भी वृक्ष मन में कोई सुख नहीं मानते। कोई यदि वृक्षों को काटता है तो वे उसे मना भी नहीं करते। निंदा व स्तुति को संतजन समान मानते हैं। वे तो पूर्ण धैर्यवन्त सागर के समान ही होते हैं। नामदेव कहते हैं—ऐसे सन्त के यदि दर्शन हो

गये समझ लो साक्षात भगवान ही मिल गये।

26. हे भगवान, अमृत से भी मधुर तुम्हारा नाम है। फिर मैं उसका स्मरण क्यों नहीं करूंगा? हे पंढरीनाथ, तुम ही बताओ, इस मन का मैं क्या करूं? तुम्हारा ध्यान मेरा यह मन क्यों नहीं करता? कीर्तन के समय नींद आती है और सांसारिक सुखों में यह मन रमा हुआ है। नामदेव कहते हैं—संत जन हरिनाम का कीर्तन व गर्जन करते हैं पर फिर भी लोग उस पर ध्यान नहीं देते।

27. भगवान की राह देखते-देखते मेरी आंखें थक गई हैं। अब मेरे हृदय में भगवान के दर्शनों के सिवा और कोई आस नहीं बची है। विट्ठल अब तुम दौड़ते आओ और मुझे दर्शन दो। तुम मेरी मां हो। तुम मेरी पक्षिणी हो और मैं तुम्हारा बच्चा हूं। तुम्हारे दर्शनों की मुझे ऐसी जोरदार भूख लगी है कि कुछ भी अच्छा नहीं लगता। तुम मेरी हरिणी हो और मैं तुम्हारा छौना हूं। तुम मेरी गाय हो और मैं तुम्हारा बछड़ा हूं। तुम मुझे स्नेह से दूध पिलाओ। नामदेव कहते हैं—हे भगवान, मेरी आशा पूर्ण करो। मेरा मन संसार में लिप्त है। उसे मुक्त करो। मुझे दर्शन दो!

28. हे पांडुरंग, तुम मेरी मां हो मैं तुम्हारा बच्चा हूं। मुझे दूध से वंचित मत करो। तुम मेरी हरिणी हो और मैं तुम्हारा छौना। हे पांडुरंग, मेरे सांसारिक बंधनों को तोड़ो। तुम मेरी पक्षिणी हो, मैं तुम्हारा बच्चा हूं। मुझे दर्शन दो कछुवी का ध्यान जैसे सदा उसके बच्चे पर रहता है, वैसे ही हे पांडुरंग, मुझ पर दया करो. नामदेव कहते हैं—हे विट्ठल तुम भक्ति के अधीन हो। तुम सदा मेरे साथ रहो और मुझे संभालो।

29. चिड़िया आकाश में उड़ गई पर उसका मन तो घोंसले में उसके बच्चे में ही लगा हुआ है। उस चिड़िया के समान मेरा मन भी भगवान में ही सदा लगा रहे तो संसार का कोई दुख मुझे दुखी नहीं करेगा। वन में चरते समय जैसे गाय का ध्यान बछड़े में रहता है। सिर पर पानी का घड़ा रखकर महिला अपनी सखी से बातें करती है पर उसका ध्यान सिर पर घड़े पर ही रहता है। नामदेव भगवान से विनती करते हैं कि हे भगवान मुझे अपने प्रति भक्ति दीजिए।

30. हमारी जिव्हा पर भगवान के गीत हों, मन में उनके प्रति प्रेम हो और भगवान की भक्ति में हम नाचें। कब क्या गाना चाहिए, यह हम नहीं जानते। हम तो केवल नाम स्मरण जानते हैं। उसे कोई बंधन नहीं है। हमारा ध्यान संगीत की ताल, लय, छंद आदि पर नहीं रहता। ये यदि दक्षिण की ओर जाते हैं तो हमारी चाल पश्चिम की ओर रहती है। बालक की तोतली बोली भी मां को प्रिय लगती है। नामदेव कहते हैं — हे भगवान, मुझे अनेक जन्मों तक आपकी सेवा करने का वरदान दीजिए।

31. हम ऐसे बोल बोले, जिसे सुनकर विट्ठल डोलने लगे। सबके लिए हमारे मन में प्रेम हो और मुख में विट्ठल रखुभाई का नाम हो। भगवान का निवास चाहे जितनी दूरी पर हो, हम तो

उनके पास ही रहेंगे। भगवान जो सबके स्वामी हैं, वे ही मेरे सर्वस्व हैं। हम कीर्तन के रंग में रंगकर नाचेंगें और सारे संसार में ज्ञान रूपी दीपक प्रज्वलित करेंगें। नामदेव कहते हैं कि गुरु ने मुझे भक्ति का मार्ग बताया और सारी सत्ता मेरे हाथों में आ गई।

32. हे भगवान तुम और मैं दोनों एक रूप हैं। तुम यदि आकाश हो तो मैं भूमि हूं। तुम शिवलिंग हो तो मैं सालुंका हूं। तुम समुद्र हो तो मैं चंद्रिका हूं। तुम तुलसी हो तो मैं मंजरी हूं। तुम बंशी हो तो मैं उसका नाद हूं। तुम चांद, मैं चांदनी। तुम नाग, मैं पद्मिनी। तुम कृष्ण, मैं रुक्मिणी। तुम नदी, मैं किनारा। तुम धनुष तो मैं तर्कश। तुम शास्त्र, मैं गीता। तुम चंदन, मैं अक्षत। नामदेव कहते हैं — हे भगवान, मैं तुम्हारे प्रेम में रंग गया हूं। हम दोनों एकाकार हो गये हैं।

33. मुझे विट्ठल के दर्शन करने दो। मैं उनके दर्शन करने के लिए तरस उठा हूं। मैं कस्तूरी-कुंकुम विट्ठल को लगाऊंगा। नीले बादलों के समान विट्ठल को बड़े प्रेम से जाई जुइ के फूलों की माला पहनाऊंगा। नामदेव कहते हैं कि पंढरपुर के राजा विट्ठल के दर्शनों से व उनके प्रसन्न होने से नयन-मन-प्राण आनंद से पुलकित हो जाते हैं।

34. चिड़िया सवेरे चारा पानी लेने उड़ जाती है और घोंसले में बच्चे भूखे बैठे उसकी राह देखते हैं। उन बच्चों के समान ही मेरी स्थिति है। दिन-रात भगवान की आस मुझे लगी रहती है, बछड़ा घर पर बंधा रहता है पर उसका ध्यान उसकी मां गाय पर ही लगा रहता है। नामदेव कहते हैं — हे केशव तुम ही मेरे सगे-सम्बन्धी हो। हे अनाथों के नाथ, तुम जल्दी आओ और मुझे संभालो।

35. माया की पहचान जीवन और मरण है। हे नारायण, मुझे यह सब नहीं चाहिए। मुझे तो केवल तुम्हारा साथ चाहिए, और कुछ नहीं। तुम नष्ट नहीं होगे। मैं तुम्हारा साथ कभी नहीं छोड़ूंगा। तुम्हारा व मेरा सम्बन्ध ही ऐसा है। तुम्हारी भक्ति ही मेरा सबसे बड़ा लाभ है। नामदेव कहते हैं — तुम्हारी भक्ति के सिवा मैं और कुछ नहीं जानता। मैं उस संसार में कैसे रहूं व मेरा क्या होगा, यह सब भगवान तुम जानो। मेरी लाज तुम्हारे हाथों है।

36. मेरा मन जहां-जहां भी भटके, वहां पांडुरंग का निवास रहे और चन्द्रभागा नदी और भगवान पंढरी पर मेरी दृष्टि सदा बनी रहे। मेरा मन व आंखें अन्यत्र कहीं जाएं ही नहीं। भगवान का निवास सदा मेरे मन में ही रहे। हे भगवान, मेरी इस आशा को पूर्ण करो। तुम ही मेरे माता-पिता हो। अपने कर-कमलों की शीतल छाया मुझ पर करो। नामदेव कहते हैं — हे भगवान, मैं तुम्हारे बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता। तुम यदि नहीं मिले तो मेरे प्राण छटपटाते रहेंगें।

37. विट्ठल मेरे कुल देवता हैं। वे बंशी बजाते हैं व गौए चराते हैं। उनके तन पर चंदन लगा है। गले में वैजयंती माला है। हाथ में सुदर्शन है। पीला पीताम्बर वे पहने हैं और ईट पर खड़े हैं। नामदेव कहते हैं — हे विट्ठल, तुम्हारे इस रूप के दर्शनों का मैं भूखा हूं। मुझे जल्दी दर्शन दो।

38. तुम पतित पावन हो, यह कीर्ति सुनकर ही हे भगवान, मैं तुम्हारे द्वार पर आया हूं। लेकिन तुम पतित पावन नहीं हो, इसलिए मैं वापिस जा रहा हूं। तुम कैसे उदार हो, यह मैं जानता हूं। तुम्हारी भक्ति करें तो ही तुम कुछ देते हो। ऐसे कृपण के घर जाने से क्या लाभ ! हे भगवान, तुम पतितों का उद्धार करने वाले हो, यह अभिमान अब त्याग दो। किसने तुम्हारा नाम पतित पावन रख दिया ! अब तो हाथ में डुगडुगी लेकर मैं तीनों लोकों में डोडी पीटूंगा कि तुम पतित पावन नहीं बल्कि पूरे विश्वासघाती हो। नामदेव कहते हैं — हे भगवान, मैं तुम्हारे चरणों में इसी आशा में पड़ा हूं कि तुम मुझे दर्शन दोगे व अपने हृदय में स्थान भी दोगे।

39. दसों दिशाएँ निर्मल हैं। मेरा मन आनंद से भरपूर है क्योंकि मेरे विट्ठल आएंगे और मुझे आलिंगन करेंगें। जैसे परम स्नेहमयी मां मिल गई हो, ऐसा परम आनंद मुझ पर छा जाएगा। मेरे वे भगवान मेरे पास बैठकर मीठी-मीठी बातें करेंगे प्रेम व कृपा से भरपूर नजरों से मुझे देखेंगें और वे मुझे अपनावेंगे। फिर संसार सागर से तरने का मार्ग वे मुझे बताएंगे। नामदेव कहते हैं — तब मेरे जीवन में आनंद ही आनंद छा जाएगा और मैं आनंद विभोर हो संतों के सामने नाच-नाच कर भगवान का दिया हुआ वह मंत्र उन्हें बताऊंगा।

40. हमारी जागीरदारी व वतन सब वहीं है जहां भगवान पंढरी निवास करते हैं। पंढरीनाथ का घर ही हमारा सब कुछ है। हम वहीं रहते हैं। वहां हम नित्य भगवान की सेवा करते हैं और उनके महाद्वार के सामने मस्ती से नाचते हैं और भगवान के नाम का जयजयकार करते हैं। भगवान के नाम का महत्व हम सारे जग को बताएंगे। साधु-संतों की शरण भी जाएंगे और स्वभाव से अत्यन्त दयालु वे हमें सच्चा ज्ञान देंगे। नामदेव कहते हैं — हम तो भगवान के मंदिर की सीढ़ियों को जोड़ने वाले हैं और उन सीढ़ियों पर चरण रखकर जाने वाले संतों से हमें ज्ञान प्राप्त होगा।

41. सर्वत्र एक ही तत्व व्याप्त है। वे भगवान ही सर्वत्र हैं और वे ही सबके नियंता हैं। एक ही ब्रह्म सारी दुनिया में छाया है। उसे ही देखो, अनुभव करो। और कोई विचार मन में मत लाओ और सारी बातें मिथ्या हैं, व्यर्थ हैं। यदि अपना हित करना हो तो जितनी जल्दी हो सके हरि का भजन करो। नामदेव कहते हैं — वेदों ने जिसे समर्थ कहा है, उस ब्रह्म के पास कोई भेद नहीं है।

42. सारे दुखों का मूल मनुष्य जीवन है। उस जीवन की अवधि का माप हर घड़ी काल करता है। हर घड़ी, हर पल मनुष्य का जीवन कम होता रहता है। उसके पीछे काल सतत् लगा हुआ है। नामदेव कहते हैं, मनुष्य जीवन को सार्थक करने के लिए भगवान की शरण में जाओ। भगवान बड़े दयालू हैं, उनकी कृपा व दया कभी कम नहीं होती।

43. निन्दा पर थोड़ा भी ध्यान मत दो। जो लोग निन्दा करते हैं, उन्हें करने दो। सज्जनों को उन पर क्रोध करना ही नहीं चाहिए। जो व्यक्ति निन्दा स्तुति को समान समझता है, उसकी स्थिति समाधि की हो जाती है। जो शत्रु व मित्र को समान मानता है, वह भगवान का प्रिय होता है। मिट्टी व स्वर्ण

जिसकी दृष्टि में समान है वही योगीराज है। नामदेव कहते हैं — ऐसे भक्त से तीनों लोक पवित्र होते हैं।

44. भवसागर पार करने में डरते क्यों हो ? उस किनारे पर सबको तारने वाले पांडुरंग खड़े तो हैं ! अपने भक्तों के लिए वे बैकुण्ठ से यहां रेत में — चन्द्रभागा नदी के किनारे खड़े हैं। यह स्थान उन्हें बहुत प्रिय है। भगवान कहते हैं — यहां पंढरपुर में आओ और मेरा नाम प्रेम से स्मरण करो। मैं तुम्हें इस भवसागर से पार कर दूंगा। मेरे इस कथन की साक्षी पुंडलिक है। जो व्यक्ति श्रद्धाभक्ति व दृढ़ता पूर्वक मुझे अपने हृदय में रखते हैं, मैं उसका सारा भार उठाता हूं और उसे भवसागर से मुक्त कर देता हूं। इसमें यदि शंका हो तो नामदेव से पूछो। नामदेव कहते हैं कि भक्ति से भगवान मिलते हैं, इस बात पर मेरा पक्का भरोसा है।

45. शब्दों का सुख सुनने में है और मेरे दयालू भगवान ने यह सुख मुझे दिया है। स्पर्श का सुख शरीर से, रूप का नेत्रों से, रस का जिव्हा से और गंध का नाक से है। मेरे दाता भगवान ने ये सारे सुख मुझे दिये हैं। नामदेव कहते हैं — जिसके ऐसे महान उपकार हैं, उसे अज्ञानी भूले हुए हैं।

46. यह मनुष्य जन्म देखते-देखते बीत गया और जन्म-मरण का चक्र साथ लग गया। हे मूढ़, तू कैसे दुखदायी चक्र व भ्रम में फंस गया है। देख तेरे चारों ओर काल की सेना का घेरा छाया हुआ है। तेरा यह शरीर अनेक रोगों का घर है। नौ द्वार नरक से भरे हैं। फिर भी तेरी समझ में कुछ आता नहीं। तू माया-मोह में उलझा है। कहता है — ये मेरे यार हैं। पर अंतकाल में ये सब तुझे त्याग देंगे। नामदेव कहते हैं — मैं तुझे पूरे भरोसे से कहता हूं कि तू नारायण की शरण में जा, वे ही तुझे तारेंगे।

47. सांवले विट्ठल को देखने से नयन-मन प्राण तृप्त हो जाते हैं। जैसे आकाश में सूर्य व चन्द्रमा शोभित हैं, वैसे उनके कानों में कुण्डल शोभा देते हैं। उनके गले में वैजयंती की माला है। पीला पीताम्बर वे पहने हैं। नामदेव कहते हैं — हे पंढरीनाथ, आप कृपावंत होकर जल्दी आओ और दर्शन दो।

48. वह गाय भगवानमय है। पवित्र चन्द्रभागा का वह पानी पीती है, भगवान का नाम स्मरण करते हुए वह चौदहों लोकों का भ्रमण करती है। नामदेव कहते हैं — प्रेम से व्यवहार करने वाले भक्तों के घर वह जाती है और पापियों को मारने दौड़ती है।

49. उठो, उठो, प्रभात हो गया। श्री विट्ठल का स्मरण करो। वे दोनों के पालक हैं और स्मरण करते ही दौड़कर आते हैं। भीमा नदी के तट पर सुंदर, मनोहर, छोटी सी पंढरपुरी है। वहां कमर पर दोनों हाथ रखकर वे मिलने के लिए ही खड़े हैं। उनका श्रीमुख बहुत ही सुन्दर है। किरीट, कुण्डल,

वैजयंतीमाला उन पर बहुत ही भली लगती है। गले में तुलसी की माला सुशोभित है। वे बहुत ही सुन्दर है। गले में कौस्तभु का कंठा वे पहने हैं। उनके शरीर पर केशर व मस्तक पर बुका लगा है। पीला पीताम्बर वे पहने हैं। चरणों में अक्षय ईंट है। समस्त सौंदर्य की वे साकार प्रतिमा है। उन्हें तुलसी व बुका बहुत प्रिय है। वे अपने भक्तों पर असीम प्रेम करते हैं। ऐसे भगवान के चरण कमलों की पादुका का नामदेव वंदन करता है।

50. हे साधु संतों उठो और अपने हितों को साधो। तुम्हारा यह मनुष्य जीवन जा रहा है। जीवन समाप्त हो जाएगा, तब भगवान को कैसे स्मरण करोगे। उठो और तेजी से मन्दिर में जाओ। वहां काकड़ आरती के दर्शन करने से अनंत पाप भस्म हो जाते हैं। वहां देखो, ईंट पर विट्ठल खड़े हैं। उनके चरण-कमलों के दर्शन करो। उनकी अमृत दृष्टि का सुख लो। रुक्मणी के पति को नींद बहुत प्रिय है। उन्हें जगाओ। उनकी नजर उतारो। उनके सामने ढोल, ढमाका और विविध वाद्य बजते हैं और काकड़ आरती होती है। शंख सिंहनाद होता है। महाद्वार पर इन सारे वाद्यों का घोष होता है। ईंट पर खड़े भगवान के चरणों की वंदना नामदेव करता है।

51. भगवान मैं आरती उतारना चाहता हूं। पर कहां व कैसे उतारूं। जहां देखता हूं, वहां मुझे चतुर्भज भगवान के दर्शन होते हैं। सबमें मुझे भगवान का स्वरूप ही दिखाई देता है। इस संसार के जितने नर-नारी और मेरे स्नेही-सम्बन्धी हैं, वे सब मुझे चतुर्भज भगवान के समान लगते हैं। नामदेव कहते हैं — वे भगवान गले में वैजयंती माला पहने हैं।

52. अनेक युगों से भगवान पांडुरंग पंढरपुर में ईंट पर खड़े हैं। उनकी बाईं ओर रुक्मणी है। उनकी शोभा दिव्य है। भक्त पुंडलिक को मिलने स्वयं भगवान आये हैं। पंढरपुर में उनके चरणों में भीमा नदी बहती है जो जगत के उद्धार के लिए आई है। पांडुरंग तुम्हारी जय हो। रुक्मणी के पति तुम्हारी जय हो। तुम्हारे गले में तुलसी की माला है, पीतांबर पहने हो, मस्तक पर कस्तूरी लगी है। कमर पर हाथ रखकर खड़े हो। तुम्हारे दर्शनों को सारे देवता आते हैं। तुम्हारे सामने गरुड़ व हनुमान खड़े रहते हैं। आषाढ़ी कार्तिकी को भक्त दर्शन करने आते हैं, चन्द्रभागा में वे स्नान करते हैं। नामदेव कहते हैं — उनके दर्शन व जयजयकार करने से ही मुक्ति मिल जाती है। नामदेव कहते हैं ऐसे भगवान को मैं भक्ति पूर्वक स्मरण करता हूँ।

53. हे भगवान , तुम्हारी भक्ति के सिवा जिसे और कुछ काम नहीं है, उस व्यक्ति का जीवन चलाने का सारा भार आप उठा लेते हैं। जो व्यक्ति स्वयं को आपके चरणों में अर्पित कर देता है, उसे फिर संसार की कोई चिंता नहीं रहती। आप उनके इहलोक को व परलोक भी संभाल लेते हैं। नामदेव कहते हैं — मेरे लिए भगवान की भक्ति ही सब कुछ है।

54. फूलों की माला का चित्र तो चित्रकार बना सकता है, पर फूलों की सुगंध वह चित्रित नहीं कर सकता। चांद व सूर्य का भी चित्र बनाया जा सकता है पर प्रकाश का चित्रण संभव नहीं है।

सन्यासी का स्वांग तो लिया जा सकता है पर वैराग्य नहीं। गुमे हुए रत्न और हानि की चिंता नहीं करनी चाहिए। नामदेव कहते हैं — सब कुछ किया जा सकता है पर विनोबा (भगवान) के प्रेम का स्वांग नहीं किया जा सकता।

55. हे भगवान, मैं तुम्हारे चरणों की वंदना करना चाहता हूं पर कैसे करूं, क्योंकि वे तो पाताल में है। तुम्हें मैं अपने हृदय में कैसे रखूं। आपका रूप वेदों के लिए भी अगोचर है। अतः उसका दर्शन या वर्णन कैसे किया जा सकता है ? मैं तुम्हारे नाम का स्मरण भी कैसे करूं, क्योंकि तुम्हारे नाम व गुण भी अनंत है। नाम का स्मरण के बिना भगवान को पाना असंभव है। तीर्थ स्थान भी इस विशाल भूमि में अनंत है और मेरा जीवन बहुत छोटा है। सांसारिक माया-मोह बढ़ता ही जाता है। ये सब कैसे टूटेंगे ? नामदेव कहते हैं — कठोर व्रत व भक्ति के बिना भगवान के दर्शन संभव नहीं है। भगवान के दर्शन से ही जन्म मरण का संकट तत्काल समाप्त हो सकता है और कोई रास्ता नहीं है।

56. भगवान की भक्ति ही पूर्णिमा और ज्ञान चन्द्रमा है। भक्ति से पूर्ण बोध हो जाने पर आनंद रूपी सागर में ज्वार आता है। राम नाम का स्मरण ही उस सागर का गर्जन है। नामदेव कहते हैं कि जिसे भगवान की भक्ति प्राप्त हो जाती है, वही सच्चे अर्थों में जीवनमुक्त व भगवानमय हो जाता है।

57. सागर के सीप में पानी पड़ने से वहां मोती पैदा हो जाता है। पानी से मोती किसकी महिमा से बनता है ? चट्टान में बंद जीव को भोजन भी वे भगवान ही देते हैं। नामदेव कहते हैं कि नाम की महिमा बहुत अधिक है। नाम में ही सारा ब्रह्मांड समाया है।

अमृत वाणी (हिन्दी)

सफल जनमु मोकउ गुर कीना। दुख बिसारि सुख अंतरि लीना।।
ज्ञान अंजनु मोकउ गुरु दीना। राम नाम बिनु जीवनु मन हीना।।
नामदेइ सिमरनु करि जाना। जगजीवन सीऊ जीऊ समाना।।

रसना रंगी लै हरि नाम। लै हरि नाम सरैं सब काम।।टेक।।
रसना है तू बकबादणीं। राम सुन रै क्यों पापणी।।1।।
रसना तौ पैं मांगू दान। राम छांड़ि माति सुमरै आंन।।2।।
जप तप तीरथ कौणे काम। नामदेव कहै मोंहि तारैगो राम।।3।।

आदि जुगादि जुगादि जुगो जुगु ताका अंत ने जानिआ।
सरब निरंतरि रामु रहिआ रवि ऐसा रूपु बखानिआ।।

गोबिंद गाजै सबदु बाजै आनंदरूपी मेरो रामइआ : बावन बीखू बाने बीखे वासु तें सुख लागिला।।
तुमचे पारसु हमचे लोहा संग कंचनु भैइला।।
तू दइआलु रतनु लालु नामा साचि समाइला।।

अणमडिआ मंदलु बाजै। बिनु सावन घनहरू गाजै।।
बादल बिनु बरखा होई। जउ ततु बिचारै कोई।।
मोकउ मिलिउ रामु सनेही। जिह मिलिऐ देह सुदेही।।
मिलि पारस कंचनु होइआ। मुख मनसा रतनु परोइआ।।
निज भाऊ भइआ भ्रमु भागा। गुरु पूछे मनु पतिन आगा।।
जल भितरि कुंभ समानिआ। सम रामु एकु करि जानिआ।।
गुरु चेले है मन मानिआ। जन नामै ततु नमै ततु पछानिया।।

जत्र जाउं तत्र बीठल भैला। बीठलियौ राजाराम देवा।।टेक।।
आनिलै कुंभ भराइले उदिक। बालगोबिन्दहि न्हाण रचौ।।
पहलै नीर जु मछ बिटाल्यौ, झूठण भैला कांइ करूं।।1।।

आंणिलै केसरि सुकडि समसरि, बाल गोविंदहि षौलि रचूं।
पहली बास भुवंगम लीन्ही, जूंठणि भैला कांइ करुं।।2।।
आंणिलै पुहुप गूंथिलै माला, बाल गोबिदहिं हार रचूं।
पहली बास जूं भंवरै लीनी, जूठणि भैला काइ करूं।।3।।
आंणिलै घृत जोइलै बाती, बाल गोविंदहिं जोति रचूं।
पहली जीति जुं नैननि देषी, जुठणि भैला कांइ करूं।।4।।
आंणिलै अगर पैइलै धूपा, बाल गोबिंदहिं धूप रचूं।
पहली बास नासिका आई, जूठणि भैला कांइ करूं।।5।।
आँणिलै तंदुल रांधिलै षीरो, बाल गोविंदहि भोग रचूं।
पहली दूध जू बछा बिटाल्यौ, जूठणि भैला कांइ करूं।।6।।
आऊं तौ बीठल जाऊं तौ बीठल, बीठल व्यापक माया।
नामा का चित हरि सूं लागा, ताथैं परम पद पाया।।7।।

संत सूं लेना संत सूं देना। संत संगति मिलि दुस्तर तिरना।।टेक।।
संत की छाया संत की माया। संत संगति मिलि गोविंद पाया।।1।।
असंत संगति नामा कबहूं न जाई। संत संगति में रह्यौ समाई।।2।।

मॉडर्न प्रिन्टर्स, के-30, नवीन शाहदरा दिल्ली-110032 द्वारा मुद्रित